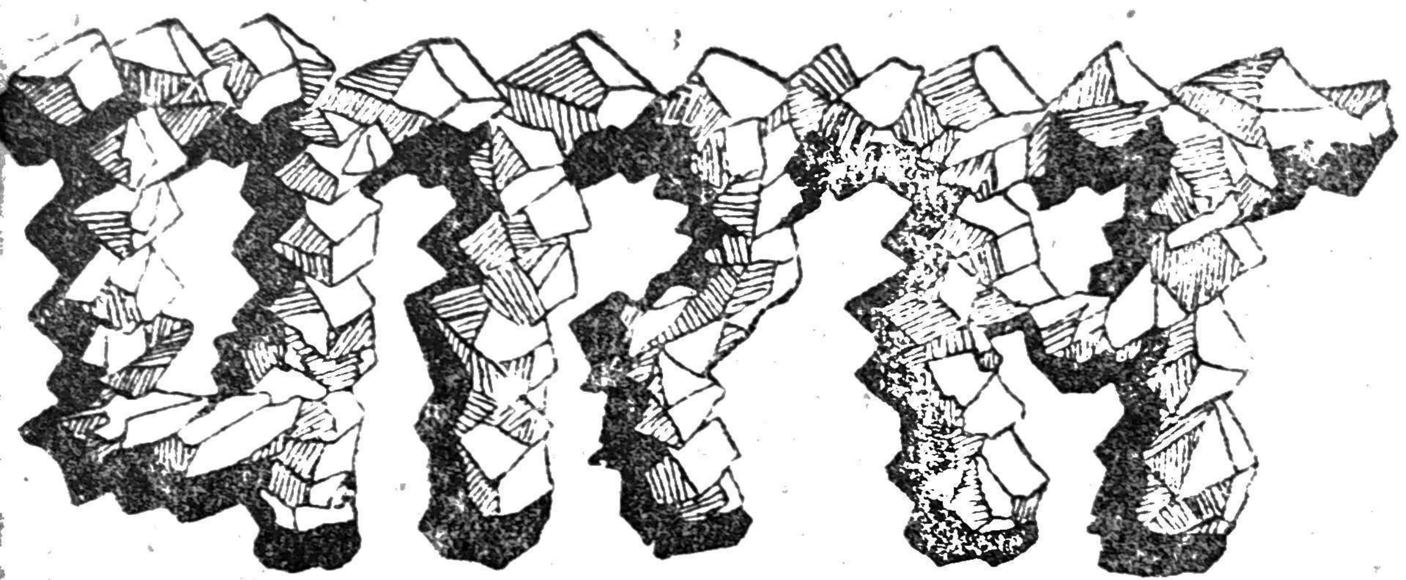


— कुशवाहा कान्त



भारत पॉकेट बुक्स

©

जयन्त कुशवाहा

प्रकाशक
भारत पाकेट बुक्स
हीरापुरा, वाराणसी-१

अधिकृत विक्रेता
चिनगारी प्रकाशन
पो० बा० ७८, वाराणसी-१

मुद्रक
चिनगारी प्रेस
सीके ६४/५ जालपादेवी रोड,
वाराणसी-१

मूल्य
तीन रुपया मात्र

PARAS • NOVEL • KUSHWAHA KA

उधर आसमान की छाती पर पूर्णमासी का सुनहला, कुछ रुपहला चाँद आया, इधर प्लेटफार्म की छाती पर एक दूसरा ही गोरा-गोरा चाँद उतरा। नाम मधु ! वयस सोलह-सत्रह के बीच।

आकर्षक वेश-भूषा के मध्य शरीर कञ्चन-सा चमकदार।

आँखें आम की एक-एक फांक-सी लम्बी, काले, बादलों-सी श्यामल, भरी बोतल-सी नशीली, हिरन के कुलाँच-सी चञ्चल।

होंठ खिले गुलाब से लाल, वक्षस्थल पहाड़ी शिखर से बेहोश, कमर लहरों-सी गतिशील, पाँव गज से मन्दगामी, हाथ लजारो लता से सुकुमार।

जमीन का चाँद जब रेलगाड़ी से उतरा तो प्लेटफार्म हँस पड़ा। छोटी-छोटी लालटेनों की फीकी हँसी धुँधली पड़ गई। लोग इधर-उधर देखकर उधर ही देखने लगे। छोटे-से स्टेशन पर ऐसे चाँद के उतरने की यह पहली घटना थी शायद।

मधु हैरान थी। लोग उसकी ओर इतनी प्यास लिए क्यों देख रहे हैं ? देखना ही है तो वे ऊपर का चाँद देखें, जो उनकी आँखों शीतल-तृप्ति दे सकता है, उनके घरों का कोना रोशनी से भर है।

एक युवक तेजी के साथ सामने से जा रहा था, कुछ घबड़ाया खोजता-सा। मधु की दृष्टि उस पर पड़ी। उसे सहारा मिला तेज आवाज में उसने पुकारा—'नवल ठाकुर ! मैं यहाँ हूँ...'

युवक रुक गया। मधु को देखा उसने। खोई-खोई-सी खोजती में अनायास ही चमक भर आई। वह झपट कर पास आया। भी कुछ आगे हो रही। युवक ने उसका हाथ पकड़ लिया।

'तुम यहाँ हो मधु !....तुम आ गई ?'

'आ तो गई, मगर तुम इतने घबड़ाये से क्यों हो....बहुत हाँफ रहे हो नवल ठाकुर !....'

'देख लो !....' नवल बोला—'मुझे परेशान करके तुम्हें क्या मिल जाता है ? तुम्हारे आने का तार मुझे गाड़ी आने के केवल पाँच मिनट पहले मिला ..'

'मैंने तो दोपहर को ही तार दे दिया था....'

'दे दिया होगा....देहात है न ! दूसरे का तार होता तो मामूली चिट्ठी बनकर आता...बड़े राजा का प्रभाव है कि पोस्टमास्टर तक काँपता है, नहीं तो हमारा गाँव तारघर से आठ मील दूर है....'

'मैं क्या जानती थी....कभी आई भी तो नहीं यहाँ ! तुम यहाँ आये न होते तो शायद मैं लौट जाती....'

'क्यों ?....'

'यहाँ के लोग जाने कैसे हैं....' बोली मधु—'देख रहे हो न ! एक-एक की आँखों में न जाने कितनी प्यास, कितनी भूख छिपी है बाप रे बाप, मैं तो परेशान होकर रह गई थी नवल ठाकुर !....'

'चलो चलें....' कहकर नवल ने मधु की छोटी-सी अटैची उठा ली। दोनों बाहर आये। नवल की बग्गी खड़ी थी।

दोनों बैठे। बग्गी चल पड़ी। बग्गी के पीछे दो बन्दूकधारी जवान खड़े थे, नवल एक बड़े जागीरदार का बेटा जो था। बग्गी में स्थान स्थान पर हाथी दाँत भी लगे हुए थे।

नवल और मधु दो साल पहले कालेज में सहपाठी थे। मधु समाज द्वारा उपेक्षित, अनाथालय द्वारा पोषित एक असहाय युवती थी और नवल था एक बड़े जागीरदार का बेटा—फिर भी दोनों में कोई भेद न था। दुनिया चाहे भेद की सृष्टि करे, मगर नवल और मधु को इसकी चिन्ता न थी। आज दो साल बाद दोनों मिल रहे थे। कितनी ही बातें एक दूसरे से कहनी हैं, कितने ही उलाहने देने हैं, कितना ही दुख-दर्द सुनाना है....फिर भी दोनों की जबान चुप

गले में आँखों के आँसू अटक आये हैं। नीरवता में ही दोनों के हृदय बोल रहे हैं।

'आज मैं बहुत खुश हूँ मधु!' कोशिश करके नवल बोला।

'मैं भी....'कहते-कहते मधु अपने में ही शरमा कर सिमट गई।

'तुमने जल्द आने का वादा किया था...आई भी तो दो साल बाद!....'

'तुम भी तो नहीं नहीं आये शहर....' मधु बोली—'सोचती हूँ, जब गाँव में हजार आकर्षण है तो एक मधु की याद कैसे आती रही होगी तुम्हें? ...'

'आती थी मधु!....तुम्हारी याद बहुत-बहुत आती थी .. मगर जागीर की झञ्झटें सब मेरे सर...बड़े राजा का कड़ा प्रतिबन्ध....'

'मुझ पर भी क्या कम प्रतिबन्ध था....' बोली मधु—'तुम्हारे बाबा का यदि पत्र न जाता तो शायद अनाथालय से मुझे छुट्टी भी न मिलती....तुम्हारे बाबा की आज्ञा अनाथालय वाले टाल भी कैसे सकते हैं? हर साल उन्हें इतनी बड़ी रकम जो सहायतार्थ मिला करती है ...'

'पूछो मत....बड़े राजा को बड़ी मुश्किल से राजी कर पाया.... वे हजार प्रश्न एक साथ ही कर बैठे। मैंने केवल इतना ही कहा कि ठुकराई लड़की है, यहाँ आकर कुछ बन जायगी, आप देखकर बहुत खुश होंगे....बहुत बहस के बाद उन्होंने तुम्हें बुलाने को पत्र लिखा.... माँ तो पहले ही तैयार थी।

'अब तो आ ही गई....मैं ही जानती हूँ, तुमसे दूर रहकर ये दो मैंने किस तरह से काटे हैं...सच मानो, एक दिन के लिए भी याद भुलाई न गई, एक क्षण के लिए भी तुम्हें अपने से दूर कर पाई!'

'मधु!—' नवल ने कहा—'यह मत समझो कि तुमसे दूर मुझे नींद आती थी, भूख लगती थी....मुझे कुछ भी अच्छा लगता था मधु!'

'मेरी साँस का दर्द हवा के साथ उड़कर तुम्हारे पास तक नहीं पहुँच सका, मेरे आँसू की नदी बहकर तुम्हारे गांव तक नहीं आई, मेरे मासूम कलेजे की धड़कन इतनी दूर से तुम नहीं सुन सके...मैं कितनी असहाय हूँ नवल ! चाहकर भी कुछ चाह नहीं पाती, पाकर भी कुछ पाने का स्वप्न नहीं देख सकती, स्वप्न देखकर भी उसे साकार नहीं बना पाती...कितनी विवशता है....'

मधु की आवाज कलेजे के दर्द से भींग चली।

नवल ने उसका हाथ पकड़ लिया, धीरे से दबाया।

'तुम चुप रहो मधु ! अपनी आवाज सँभाल लो....गांव आई हो तो यहाँ के जड़-चेतन को, कङ्कड़-पत्थर को अपनी सर्द आह न सुनाओ। अपने आँसू की नदी में यह हँसता-खिलता चाँद न डुबाओ। गाँव मासूम है, तुम इसे अपने दर्द से मायूस न करो....'

'दिल का बाँध जब टूट जाता है नवल ठाकुर तो सँभाले नहीं सँभलती यह आँखों की नदी। इतने दिनों तक आँसू की एक-एक बूँद आँखों में सँजोकर तुम्हारे लिए रखा था मैंने....अब इसे ठुकराओ मत...'

'ऐसी बात मत कहो मधु !' नवल बोला—'हाँ, बड़े राजा से सँभल कर रहना....बूढ़े हो गये हैं न, सो बात-बात में बिगड़ बड़े होते हैं !'

'वे तुम्हारे बाबा हैं नवल ठाकुर ! मैं उनकी पूजा करूँगी....वे मुझ पर बिगड़ें, मुझे ताड़ना दें, मुझे कोई कष्ट न होगा। तुम देखना मैं उनकी कितनी सेवा करती हूँ....मेरे मां-बाप नहीं....ठाकुर दादा ने मुझे बुलाया है तुम्हारे आग्रह पर तो मैं अपने किसी आचरण से उन्हें असन्तुष्ट न होने दूँगी।'

'पिताजी के देहावसान के बाद बाबा ने ही मुझे पाला-पोसा मधु ! मुझे प्यार भी बहुत करते हैं...बुढ़ापे में थोड़ी झुँझलाहट आ ही जाती है।'

फिर दोनों चुप हो रहे। बग्गी भागती ही रही। पगडण्डी

कलेजे का घाव अब घने पेड़ों के अन्धकार में छिपता जा रहा था। चाँद का पीला रङ्ग उजला हो चला था। चाँदनी बड़ी भली लग रही थी। सालों से बिछुड़े नवल और मधु एक दूसरे का हाथ पकड़े मौन बैठे थे। कहने-सुनने को तो दिल की कहानी बहुत-कुछ थी, फिर भी थोड़ी-सी बात-चीत में ही सन्तोष कर वे चुप हो रहे।

'बग्गी रोको....' पगडण्डी के बगल से कर्कश स्वर आया।

बग्गी रुक गई। दो हट्टे-कट्टे बन्दूकधारी जवान दौड़ते हुए पास आ रहे। मधु डरकर नवल से लिपट गई।

बन्दूकधारियों ने नवल को देखा तो आदर के साथ सलाम करके पीछे हट गये। एक बोला—'कहाँ गये थे छोटे राजा ?'

'स्टेशन गया था, इन्हें लेने....' नवल ने मधु की ओर इशारा कर दिया।

बग्गी आगे बढ़ी। मधु आश्वस्त होकर बैठ गई।

'मैं तो डर गई थी....डाकू थे क्या ?....'

'नहीं तो....' हँसकर कहा नवल ने—'यहाँ से हमारी जागीर शुरू होती है। हमारी तरफ से यहाँ पहरा रहता है। रात के समय कोई भी बिना आज्ञा के जागीर में नहीं आ सकता....'

'अभी तुम्हारा गाँव कितनी दूर है ?'

'थोड़ी ही दूर समझ लो....दो मील से कुछ ही ज्यादा....'

'इस पगडण्डी पर बग्गी कितनी उछल रही है। मेरी कमर में तो दर्द होने लगा...'

'नवल के साथ अभी तुम्हें कितनी ही विकट मञ्जिलें तय करनी पड़ेंगी इस जीवन में....'

× × ×

सहिजनवाँ ग्राम काफी रौनकदार है। जागीरदार ठाकुर रामकिशोर सिंह का प्रभाव गाँव के एक-एक जर्रे पर अङ्कित है। उनका इशारा गाँववालों के लिए हुक्म है। अपनी प्रजा के लिए

उन्होंने बहुत कुछ किया है इसलिए प्रजा भी उन्हें अपना राजा, अपना पोषक, अपना पिता मानती है।

सहिजनवाँ ग्राम आदर्श ग्राम है। दूर-दूर से लोग इसे देखने आते हैं। ठाकुर के देवत्व का दर्शन कर लोग अपने को धन्य मानते हैं। गाँव में पाठशाला भी है और एक छोटा-सा डाकघर भी। ठाकुर की हवेली में एक बहुत बड़ा इलेक्ट्रिक-जेनरेटर भी लगा हुआ है, जिससे सारे गाँव में बल्ब जलते हैं।

गलियों में ईंट और पत्थर की फर्श लगी हुई है। कपड़े आदि आवश्यक सामानों की छोटी-छोटी दुकानें भी हैं। भरापूरा, खुशहाल गाँव है सहिजनवाँ।

गाँव से दूर पर जागीरदार की हवेली है, पुराने ढङ्ग की बनी हुई, फिर भी आकर्षक एवं रोबदार।

हवेली के फाटक पर चार लठैतों का पहरा है, बड़े-बड़े दो बल्ब भी जल रहे हैं। लठैत बैठे नहीं हैं, बल्कि खड़े होकर मुस्तैदी से पहरा दे रहे हैं। बूढ़े ठाकुर का हर आदमी चुस्त है: किसी में तनिक भी आलस्य नहीं। हवेली के चारों ओर ऊँची चहारदीवारी से सटकर भीतर की ओर कितने ही कमरे बने हुए हैं, जिनमें लठैतों के रहने की जगह, घुड़साल आदि हैं।

हवेली के पीछे एक बाग भी है, जिसमें सुस्वादु फलवाले वृक्षों के अतिरिक्त एक शिवालय है। बूढ़े ठाकुर के सुबह के चार घण्टे इसी शिवालय में पुजारी मातादीन के साथ बीतते हैं।

शाम हो चली है। सहिजनवाँ ग्राम लट्टुओं के प्रकाश में शहर जैसा खिल उठा है। हवेली हँस रही है।

बूढ़े जागीरदार रामकिशोर सिंह अपनी बैठक में गद्दी पर बैठे हैं। काठ की एक छोटी चौकी पर पुजारी मातादीन तिवारी आसीन हैं। गद्दी से कुछ दूर हटकर जागीर के सबसे पुराने कारिन्दा मुन्शी कालीचरन उपस्थित हैं।

सामने साफ-सुथरी दरी पर गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्ति बैठे हैं, जो बड़े राजा को जुहार करने आये हैं।

'मुन्शीजी !....' बड़े ठाकुर ने पुकारा।

'यस सर !....नहीं-नहीं, आज्ञा बड़े राजा !...' मुन्शीजी हड़बड़ा कर बोले। उनका बूढ़ा चश्मा नाक से उतरते-उतरते बचा। बेचारे खुली हुई बही बन्द कर चश्मे में कैद आँखों से बड़े राजा को देखने लगे।

'मुन्शीजी ! तुमसे हजार बार कहा कि बुढ़ापे पर तरस खाओ और इस उम्र में अंग्रेजी का पढ़ना छोड़ो....हिन्दी लिखते-पढ़ते कमर की हड्डी टेढ़ी हो गई, अब क्या खाक अंग्रेजी पढ़ोगे....हमी ने कौन-सी फारसी पढ़ी है ?'

'आप ठीक कहते हैं बड़े सरकार ! मगर छोटे राजा क्या कहते हैं, परेशान कर डालते हैं....'

'क्या कहता है नवल....' ठाकुर ने पूछा।

'कहते हैं इस युग में अंग्रेजी का ज्ञान बहुत जरूरी है—' मुन्शीजी बोले—'उन्हीं की आज्ञा से तो यह बूढ़ी जबान गिटपिट-गिटपिट कर तोड़ रहा हूँ। उन्होंने आज्ञा दी है कि जब वे मुझे पुकारें तो मैं उन्हें क्या कहते हैं 'यस सर' कहा करूँ....'

'ऐसा कहा है उसने ?'

'जी हाँ....सच कहता हूँ बड़े राजा ! इस उमर में क्या कहते हैं यह जबानी कसरत करते-करते थक जाता हूँ। लगातार चार दिनों तक रटते-रटते तब कहीं जाकर 'यस सर' सीख पाया....'यस सर' का भूत इतनी जोर से मुझ पर चढ़ बैठा है कि जब आप मुझे पुकारते हैं, तो 'यस सर' कह देता हूँ और जब छोटे राजा पुकारते हैं तो मुंह से 'आज्ञा श्रीमान।' निकल आता है। इधर आप बिगड़ते , उधर वे भी आप-डॉन....क्या कहते हैं 'अप-डाउन' होने हैं....'

'नवल तुम्हें बहुत परेशान करता है मुन्शीजी !....' हँसते हुए ठाकुर ने कहा।

'आप ठीक कहते हैं बड़े सरकार !...बच्चों को क्या कहते हैं, पाल-पोस कर बड़ा करो तो ऐसी ही परेशानी हाथ लगती है। छोटे सरकार सबसे तो, क्या करते हैं हिन्दी में ही बोलते हैं। मगर मुझसे पूछते हैं, 'हू यू आर'....नो-नो क्या कहते हैं 'हाऊ आर यू'....मगर बड़े राजा ! अंग्रेजी बोलने में आनन्द तो खूब आता है....'

'नई-नई भाषा सीख रहे हो न, तो आनन्द क्यों नहीं आयेगा.... कुछ दिनों में पूरा साहब बनने का इरादा है, क्यों मुन्शी जी....'

'नहीं बड़े ठाकुर, ऐसी बात तो नहीं....हाँ जिन्दगी में आप लोगों को खुश कर पाऊँ, यही मेरे लिए क्या कहते हैं, सबसे बड़ी खुशी है....'

'मुन्शीजी अंग्रेजी पढ़कर हमें भी पढ़ायेंगे बड़े राजा !' पुजारी मातादीन हँसकर बोले।

'यह और अच्छा रहेगा तिवारीजी ! आप भी अब अपने सभी शास्त्रों को अंग्रेजी में लिखने की तैयारी कर रखिये....नवल को खुश कर लोगे तुम लोग, इसमें सन्देह नहीं...'

तभी हवेली के बाहर बग्गी के पहियों की घड़घड़ाहट सुनाई पड़ी। पहरेदार अदब के साथ दरवाजे पर खड़े हो गये। नवल नीचे उतरा। हाथ पकड़ कर उसने मधु को भी नीचे उतारा।

मधु चकित थी गाँव की वह अनुपम सुषमा देखकर।

बोली—'बड़ा रमणीक स्थान है यह तो....शहर की थोड़ी-सी आधुनिकता गाँव में आकर कितनी भली लग रही है। यहाँ किसका जी ऊब सकेगा ?....'

'आओ, अन्दर चलें, बाबा इन्तजार करते होंगे'—बोला नवल।

दोनों बड़े से फाटक के भीतर प्रविष्ट हुए। लठैतों ने अदब से झुककर सलाम बजाया। एक पहरेदार ने पास टँगे हुए बड़े से पर जोर से मुँगरी मारकर छोटे राजा के आने की सूचना हवेली

दी। बैठक के दरवाजे के पहरेदारों ने दोनों को देखकर जुहार किया। एक ने भीतर जाकर बड़े ठाकुर को सूचना दी—'छोटे ठाकुर पधारे हैं बड़े राजा ?'

'भेजो....' बड़े राजा ने आज्ञा दी।

लठैत वापस हुआ। नवल मधु के साथ भीतर आया।

बैठक की प्राचीन ढङ्ग की सजावट देखकर मधु के नेत्र तृप्त हो गये। सब कुछ इतना मनोहारी था कि मधु विभोर-सी हो उठी।

नवल ने बड़े राजा के पैर छुए। मधु ने भी अनुकरण किया। बड़े ठाकुर का मुख गम्भीर हो गया था। वे एक टक मधु को देख रहे थे। बोले—'बैठो छोटे ठाकुर !....तुम भी बैठो बेटी !'

दोनों गद्दी पर बैठ गये। मधु उस नई जगह में कुछ-कुछ लज्जा का अनुभव कर रही थी।

'यही है वह लड़की छोटे ठाकुर ?'

'जी हाँ !'

'तुम ठीक समय पर स्टेशन पहुँच गये थे न ?'

'जी हाँ, थोड़ी देर अवश्य हो गई थी....' नवल ने कहा।

'इसका नाम मधु है शायद ?'—ठाकुर ने पूछा—'यही तो तुमने बताया था... मुन्शीजी !...'

'यस सर !...क्या कहते हैं आज्ञा बड़े ठाकुर !....चिट्ठी में इसका नाम मधु ही लिखा गया था बड़े राजा !'

इस बार जल्दबाजी में मुन्शीजी का चश्मा नाक से उतर कर होठों पर आ गया था, जिसे बेचारे ने बड़ी मुश्किल से फिर नाक पर चढ़ाया। मधु को हँसी आ गई, परन्तु होठों के बीच ही दब-पिसकर रह गई।

'लड़की तो सुशील दीख रही है मुन्शीजी !'

'क्या कहते हैं सरकार, बिना माँ-बाप की लड़की पर किसे तरस नहीं आयेगा...छोटे राजा इतने ऊँचे आसमान से एक चमकता हुआ तारा तोड़ लाये हैं बड़े राजा ! बधाई है बधाई....दुहाई

सरकार की....'

'इसके रहने का प्रबन्ध अभी करना होगा मुन्शीजी !....'

'प्रबन्ध तो हो चुका है बड़े राजा !....क्या कहते हैं....ठकुराइन बहू इस बच्ची को अपने साथ रखेंगी....छोटे सरकार से पूछ लीजिये....'

ठाकुर ने गम्भीर मुद्रा से नवल की ओर देखा।

'अम्मा ने अपनी स्वीकृति दे दी है बड़े राजा !'—कहा नवल ने।

'पुजारी जी !...' बड़े राजा ने पुजारीजी की ओर देखा।

'श्रीमान्...'

'इस लड़की को रनिवास में रखना क्या ठीक होगा ?....'

'कोई बाधा नहीं बड़े राजा ! बड़ों का कथन है कि विना माँ-बाप की सन्तान का जो पोषक होता है, वही उसका पिता है, वही सब कुछ है....इसे अपनाओ ठाकुर, इसे अपनी सन्तान समझो....कल्याण होगा....'

'ठीक है—' बड़े राजा बोले—'नवल ठाकुर ! इस मधु को अपनी माँ के पास ले जाओ। उनसे कहो कि इसे अपनी बेटी बनाकर रखें ! आज से उन्हें केवल एक बेटा ही नहीं, एक बेटी भी है....'

'एक ही बेटा नहीं बड़े राजा !'—मुन्शीजी बोले—'ठकुराइन बहू क्या कहते हैं लक्ष्मी की अवतार हैं। वे सारे गाँव को अपनी सन्तान समझती हैं। यह मधु तो उनकी गोद भर देगी, थोड़ी बड़ी है तो क्या ?...'

नवल उठ खड़ा हुआ, मधु भी।

गलियारा पार करके दोनों एक लम्बे-चौड़े आँगन में पहुँचे।

नवल अपनी माँ के कमरे में घुसा। मधु उसके पीछे ही थी।

मधु को ठकुराइन का कमरा और भी भव्य लगा। ठकुराइन पलङ्ग पर बैठी थीं। चेहरे पर अनोखा तेज था। आकृति सौम्य थी

और मुख पर मातृत्व की अपूर्व झलक देखकर मधु का हृदय श्रद्धा से भर उठा। दोनों ने पैर छुये।

ठकुराइन ने उन्हे खींचकर अपने पास बिठा लिया।

'माँ ! यही है...' नवल बोला।

'मैं देख रही हूँ'—कहा ठकुराइन ने। वे ध्यान से मधु का चेहरा देख रही थी।

'माँ ! यह तुम्हें पसन्द है ?' पूछा नवल ने।

'तू चुप रह थोड़ी देर तक' बोलीं ठकुराइन—'मुझे भर आँख देख लेने दे....इसे कौन कहता है इसके माँ-बाप नहीं ?...फूल-सी बच्ची मेरी, इतने दिनों तक काँटों के बीच पलती रही !....तू इसे पहले ही क्यों नहीं लाया नवल ?'

'ठाकुर बाबा से डर लगता था माँ !....आज तो वे कुछ बिगड़े नहीं, यही गनीमत हुई...मैंने सोचा था, मधु को देखकर जरूर कुछ कहेंगे...'

'ऐसी बेटी भला कौन नहीं पालना चाहेगा। ठाकुर बाबा से तू डरता बहुत है, मगर वे तेरे पिता के पिता हैं। उनकी ममता तूने अभी देखी कहाँ ? गाँव के किसी बड़े-बूढ़े से पूछ कि वे तुझे लड़कपन में बहलाने के लिए, पचीसों घोड़ों के रहते हुए भी, खुद घोड़ा बनते थे। कभी मुन्शी जी से पूछ ले...'

'मुन्शीजी तो, क्या कहते हैं, खुद मुझसे डरते हैं माँ !'—नवल ने कहा, मुन्शीजी के स्वर की नकल करते हुए।

'बेटा नवल ! मधु को ले जाकर इसका कमरा दिखा दे'—ठकुराइन बोलीं।

'चलो मधु !....'

अपना कमरा देखकर मधु बहुत प्रसन्न हुई।

बोली—'तुम्हारा कमरा किधर है नवल ठाकुर ?'

'तुम्हारे बिल्कुल पास' कहा नवल ने—'चलो दिखा दूँ।'

'आज ही सब देख लूँगी या और दिनों के लिए भी कुछ बाकी रहेगा'—'हँसकर बोली मधु।

'चलो भी तो...'

हाथ पकड़कर खींच ले गया नवल मधु को अपने कमरे में।

'अच्छा, रेडियो भी है ?'—मधु बोली।

'हाँ बैट्री सेट है...'

'कौन कहता है कि तुम लोग गाँव में रहते हो नवल ठाकुर !... तुमने तो अपनी हवेली को माडर्न पैलेस बना लिया है....'

'ठीक कहती हो तुम मधु !...इधर देखो, इन मूर्तियों को...'

'अहा त्रिमूर्ति !...ब्रह्मा-विष्णु-महेश एक ही शरीर में...पत्थर भी बोल सकता है क्या नवल ठाकुर ?...और यह...कृष्ण भगवान... ये तो सजीव लग रहे हैं नवल ! इनकी बन्शी जरा-सी बोल दे, बस कलाकार भगवान बन जाय...सच कहती हूँ, पत्थर की ये मूर्तियाँ अद्भुत हैं, अनमोल हैं...'

'कला इसी को कहते हैं मधु !...'

'धन्य है वह कलाकार नवल ठाकुर ! जिसने पत्थर के इन टुकड़ों को सोना बना दिया है...अरे बहुत-सी मूर्तियाँ इकट्ठी कर ली है तुमने ?...कहाँ से पा गये इन्हें ?'—

मधु उन प्रस्तर मूर्तियों को देखकर ठगी-सी खड़ी थी !

'पाया नहीं इन्हें खरीदा है मैंने'—बोला नवल—'पत्थर की मूर्तियाँ मिट्टी के मोल बिकती हैं यहाँ...'

'यहाँ ?...' विस्मित स्वर में बोली मधु—'नवल ठाकुर ? क्या तुम्हारे कहने का मतलब यह है कि इन मूर्तियों को तुम्हारे गाँव के किसी कारीगर ने बनाया है ?'

'मेरे गाँव का नहीं, पास ही की एक दूसरी जागीर में रहता है वह...'

'ऐसी मूर्तियाँ कला की दृष्टि से अमूल्य हैं नवल ठाकुर ! तुमने

ऐसे अद्भुत कलाकार को उठाने की कोशिश क्यों नहीं की ? यदि ये मूर्तियाँ किसी बड़े शहर की प्रदर्शनी में जा पहुँचें तो लोगों की आँखें खुल जायँ कि हमारे देश में कितने अनमोल कलाकार उपेक्षित पड़े हैं, जिन्हें कोई जानता तक नहीं....'

'जिस जागीर में वह रहता है, वहाँ के जागीरदार से हमारा मनमुटाव है।' नवल ने कहा—'हम लोग कभी उधर नहीं जाते। ये मूर्तियाँ कभी-कभी एक सौदागर हमारे हाथ बेच जाता है।'

'कितने में ?'

'बारह आने—एक रुपये में...'

'बाप रे बाप, इतनी बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ जो शहर में पचास-सौ में भी न मिलें, यहाँ मिट्टी के मोल। तभी तो बेचारे कलाकार भूखों मरते हैं।'

'गाँव वाले इनकी कला क्या समझें मधु ! मगर है वह कलाकार महान ! हमने देखा नहीं, उसके बारे में बहुत-सी होनी-अनहोनी बातें सुनी है...'

'होनी-अनहोनी कैसी ?' मधु को उस कलाकार के प्रति प्रगाढ़ सहानुभूति हो आई थी।

'सुनते हैं कि वह जन्मजात अन्धा है...' बोला नवल।

'अन्धा !'—मधु जैसे स्वप्न में उड़ते-उड़ते जाग-सी पड़ी—'क्या कहते हो नवल ठाकुर ! भला अन्धा भी कहीं मूर्तियाँ बना सकता है ?'

'मैं ठीक कह रहा हूँ मधु !...वह अन्धा है, देख नहीं सकता जरा भी...जो कुछ बनाता है, अपनी अन्तर की आँखों से देख कर... इतना ही नहीं, सुना जाता है कि वह अनजान व्यक्तियों का कोई भी अंग छूकर उनकी मूर्ति गढ़ देता है, फिर भी आकृति में तनिक अन्तर नहीं आता...हो सकता है इन बातों में अतिशयोक्ति भी हो...'

'यदि यह सब सच है तो वास्तव में वह कलाकार संसार में एक है और अपनी बदकिस्मती से अन्धकार में पड़ा पिस रहा है। जागृत

भिन्न उसे जान ले तो उसकी पूजा करने लगे...उसका नाम जानते हो नवल ठाकुर ?'

'पारस नाम है उसका, ऐसा सुना था'—बोला नवल ।

'मैं उसका पता लगाऊँगी...' मधु ने कहा ।

'तुम उधर नहीं जा सकती...दोनों जागीरों में कट्टर शत्रुता है....'

तभी ड्योढ़ी पर से मुन्शीजी ने पुकारा—'छोटे राजा !....ओ छोटे सरकार !...क्या कहते हैं आई केम यस सर !'

'आप क्यों आये हैं ?...'

'बड़े राजा ने कहा है कि कल आपको मेरे साथ धानपुर वसूली के लिए चलना होगा...क्या कहते हैं, मास्ट गो...'

'चलूँगा....आप सबेरे ही मुँह धोकर तैयार रहिएगा...'

'मैं पैर-हाथ मुँह सब धोकर तड़के ही आ जाऊँगा...मधु बिटिया से क्या कहते हैं हलुआ बनवाए रहिएगा...और हाँ मुन्शियाइन के पास जरा मधु को भेज दीजियेगा, मिल आयेगी, क्या कहते हैं...'

'अच्छा !....अब आप गेट आउट, नहीं तो क्या कहते हैं देर हो जायगी आपको और मुन्शियाइन चाची बिगड़ने लगेंगी...' नवल ने चिढ़ाते हुए कहा ।

'आल राइट, यस सर !...' मुन्शीजी चले गये ।

'मधु ! आज तुम सफर के कारण बहुत थक गई होगी, अपने कमरे में जाकर आराम करो....' बोला नवल ।

'इतने दिनों बाद तुम्हें देखकर जो आराम मिल रहा है मुझे, उस कमरे में कहाँ मिलेगा ?....'

'अब तो हम दोनों साथ ही रहेंगे मधु ! खूब आराम दे लेना, अपनी आँखों की दो साल की प्यास बुझा लेना...'

तभी महराजिन ने आकर भोजन तैयार होने की सूचना दी ।

● ●

आधी रात में पपीहा बोल उठा है। विरही के करुण स्वर ने सूनी रात का कलेजा तक कँपा दिया है। विजन में खड़ा अकेला खजूर का पेड़ पूनो का चाँद छूना चाहता है। खेतों में खड़े छोटे-छोटे हरियाले पौधे ओस में भींग रहे हैं ! टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डी सो चली है। हवा धीरे-धीरे जाग रही है।

दूर कहीं से बाँसुरी की हल्की-मीठी ध्वनि आ रही है। ग्रामीणों की उँगलियों में जादू होता है और साँस में सम्मोहन, तभी तो यह वंशी का मधुर राग रातरानी को भी बेहोश किए दे रहा है। खामोश हवा पर तैरता हुआ किसी व्यथित ग्रामीण का दर्दीला स्वर—

"चिरई कब देबू दरसनवाँ बीतल मास सवनवाँ ना।"

हवेली की चहारदीवारी चूम जाता है कभी-कभी।

मधु जाग रही है। अगम सुख-सम्पदा-ऐश्वर्य के बीच भी नींद उससे दूर है। कभी वह करवटें बदलती है, कभी साँस लेती है। कमरे में अकेली है वह। शमा बेहोश है और अँधेरा सजग। और उस अँधेरे के बीच मधु को जाने कैसा लग रहा है। उसे डर लग हा है, यह बात नहीं, क्योंकि दरवाजे के बाहर ही एक परिचारिका सोई है। बाँसुरी की मादक ध्वनि ने उसका हृदय मसोस दिया है।

ग्रामीण की कजली का स्वर अब भी कभी-कभी उसके कानों आ समाता है।

कितना दर्द, कितनी मायूसी है इस स्वर में—

'सावन बीतल भादों बीतल, बीतल मास कुआर,
लागी अगिन बुझे ना गोरी, सूख भये पतझार—
निंदिया भइल सपनवाँ ना
चिरई कब देबू दरसनवाँ बीतल मास सवनवाँ ना....

मधु उठकर पलङ्ग पर बैठ गई। गाँव की दर्द भरी हवा ने उसके अन्तर में करुणा भर दी थी। वह बेचैन हो उठी थी।

तभी हवेली से कुछ ही दूर पर ग्रामीण युवतियों का मधुर कलरव सुन पड़ा। सात आठ कठों से निकली हुई वह धीमी खिल-खिलाहट रात की नीरवता में कितनी भली लग रही थी।

इन्हें कोई दुख नहीं, कोई चिन्ता नहीं ? दिन भर कठोर परिश्रम का पसीना बहाकर रात में हँस-खेल रही हैं बेचारी। कोई गम नहीं—सभी खुश, सभी निहाल।

मधु उठकर खिड़की के पास आ खड़ी हुई।

खिली चाँदनी हवेली के बाग में टहल रही थी। पेड़ों की हरियाली ज्योत्सना से सन कर आँखों में घर किये जा रही थी।

मधु खिड़की पर बैठ गई।

युवतियों ने अलाप लेना आरम्भ कर दिया था—

'अकेली घबराऊँ रे हो बांके छैला...'

मधु भी तो अकेली है! छैला नवल तो बगलवाले कमरे में आराम की नींद सो रहा है। वह क्या जाने कि बेकस मधु की नींद आज उसकी अधखुली पलकों से रूठ चुकी है।

मधु की व्यथा को चञ्चल युवतियाँ क्या समझें ? कैसे जानें कि उनकी आधी रात की इस अठखेली से किसी का जी जल रहा है, की जान तड़प रही है ?

उनका गाना—

मारे कटारी सुरतिया तिहारी, मैं बलि-बलि जाऊँ रे बाँके छैला

सुनते-सुनते मधु का कलेजा धड़कने लगा।

वह दरवाजे के पास आई।

धीरे से खोलकर देखा, परिचारिका सो रही थी गहरी नींद में। मधु उसकी बगल से होकर बाहर निकल आई।

आँगन में आकर कुछ देर खड़ी रही वह।

बाहर कुछ कुत्ते भौंक रहे थे, तरुणियों का गाना बन्द हो गया था। बन्शी अब भी अपना राग अलाप रही थी।

भीतर ठकुराइन के खाँसने का स्वर आया। मधु काँप उठी। दौड़कर उसने अपने कमरे में जाना चाहा, परन्तु उसके बाद ठकुराइन के जागने का कोई लच्चण न पाकर वहीं खड़ी रह गई !

कहाँ जा रही है, क्या करने जा रही है, यह कुछ भी वह नहीं जानती थी। उसका शरीर हिला, पैर चले।

उसने अपने को नवल के कमरे के सामने पाया।

पहरेदार सो गया था। मधु का दिल और जोर से धड़कने लगा। उसने दरवाजा धीरे से ढकेला। चूँ-चूँ की आवाज हुई और खुल गया द्वार। मधु ने भयभीत दृष्टि से इधर-उधर देखा। कोई नहीं था कहीं। सब सो रहे थे !

मधु भीतर आई, फिर अन्दर से दरवाजा बन्द कर दिया और स्वीच दबा कर उजाला किया। कमरा चमक उठा।

नवल सो रहा था। पत्थर की निर्जीव मूर्तियाँ रात के सन्नाटे में लग रही थीं। मधु पलंग पर आकर नवल के पास बैठ गई। धीरे से उसने उसके शरीर पर हाथ रखा तो वह चौंक पड़ा। आँखें गईं। देखा तो मधु !

'मधु !...' विस्मय भरा था उसके स्वर में।

'नवल ठाकुर बाग में चलो....'

'तुम यहाँ कैसे आई मधु ?...पहरेदार...किसी ने देखा तो ?'

'नहीं...' बोली मधु, स्वर में बेहोशी थी—'मुझे बाग में ले नवल ठाकुर !...उठो...मैं बेचैन हो रही हूँ....'

'क्यों, क्या कष्ट है तुम्हें ?...'

'नवल !' मधु ने आवेश में आकर उसका हाथ पकड़ लिया—हले बाग में चलो नवल !...सब बताऊँगो...कुछ भो नहीं

लिए नया है....तुम तो आज मुझे एकदम नये लग रहे हो ठाकुर !...' मधु ने नवल की गोद में अपना सर रख अपनी बाँहें उसके गले में माला-सी डाल दी।

'अपने को सँभालो मधु !...'

'बहुत दिनों तक सँभलती चली आ रही हूँ नवल ठाकुर !.. अब तो फिसल पड़ना चाहती हूँ। पैरों की ताकत नष्ट हो चली है.. मुझे सँभालो नवल ! इस चाँदनी को देखो...सुन रहे हो वह बन्शी मीठी तान ? अब तक बेकल किये जा रही है। तुम्हारा-हमारा दिनों का साथ है, परन्तु तुम्हें देखकर मैं इतनी बेहोश कभी नहीं थी...मुझे बहने दो नवल ठाकुर ! तुम सागर की उत्ताल तरङ्ग कर मुझे बहा ले चलो। मुझे तिनके का सहारा नहीं, तुम जैसी धार का वेग चाहिए....'

मधु की आँखें आकाश देख रही थीं और नवल की आँखें आँखों में आकाश की छाया देख रही थीं।

विकल बाँसुरी रह-रहकर रो उठती थी।

मधु कातर हो रही थी और नवल विभोर। मधु को होश था और नवल होश रहते हुए भी बेहोश हो चला था।

तभी उस खामोशी को चीरता हुआ ग्रामीण-भक्तों का यह वहाँ तक आ पहुँचा—

'काहे भटके प्राण जवानी दो दिन की।'

सुनकर नवल सजग हुआ। उसने मधु को देखा—'आँखें हृदय की गति तीव्र, होंठ कुछ खुले, कुछ कहने को आतुर... को देखा—तारे हँस रहे थे। नीली चादर पर चाँदनी दूध रही थी, छोटा-सा सुफेद बादल का टुकड़ा चांद के आस चक्कर काट रहा था...बाग को देखा – हरी-हरी घासें सो रही बड़े-बड़े पेड़ आँखें बन्द किए हुए जागते खड़े थे।

'मधु !...' उसने मधु को हिलाया धीरे से।

मधु ने आँखें जरा-सी खोल दी—'क्या है नवल ठाकुर ?' सुप्त स्वर में बोली वह।

'उस चाँद को देख रही हो...'

'देख तो रही हूँ...' मधु ने पूरी आँख खोलकर आकाश की ओर देखते हुए कहा।

'उसमें कलंक है, फिर भी दुनिया उसके पीछे मरती है'—नवल बोला।

'सौन्दर्य में कलंक न हो तो उसकी सार्थकता नष्ट हो जाती है नवल !....चन्द्र कलंकी है, शायद इसीलिए वह दुनिया की नजरों में इतना प्यारा लगता है...'

'कलंक इन्सान को नीचे गिरा देता है मधु !...आसमान के कलङ्क को देखकर लोग भले ही खुश हों, परन्तु जमीन के इन्सान का कलंक देखकर तो उँगलियाँ उठने लगती हैं...'

'तुम्हारा मतलब क्या है नवल ठाकुर ?...' मधु कुछ सजग हुई।

'पुरुष का कलंक हवा की तरह अदृश्य होता है, परन्तु नारी का कलंक तो चन्द ही दिनों में आसमानी चाँद की तरह चमकने लगता है....नारी को अपने मार्ग में पग-पग पर काँटे मिलते हैं, जिनको बचाकर आगे बढ़ना कठिन होता है...'

'और पुरुष ?....'

'पुरुष तो काँटा चुभ जाने पर भी सी नहीं करता....पुरुष को छोड़ो मधु !'

मधु कुछ सोचने लगी। आँखें फिर बन्द हो गईं। हृदय की गति कुछ सुस्त पड़ने लगी। निचले होंठ ऊपर के दाँतों के नीचे आ रहे। चुपचाप पड़ा रहा उसका सर नवल की गोद में।

तभी भक्त-जनों की भव्य वाणी एक बार पुनः हवा पर तैरती-

तैरती वहाँ तक आई—

रूप सँवारे हृदय पसारे लिए नैन रतनारे,
चार दिनों की चमक चाँदनी इसे समझ सपना रे
झूठे जग की माया झूठी मेहमानी दो दिन की
काहे भटके प्रान जवानी दो दिन की ।

'नवल ठाकुर !...' मधु आँखें मलती हुई उठ बैठी—'तुम्हारा गाँव विचित्र है !...यहाँ की हवा, यहाँ के दृश्य सभी अद्भुत हैं। इन्सान को बहा भी ले जाते हैं और तिनके का सहारा भी ला देते हैं—बेहोश भी कर सकते हैं और चैतन्य भी बना देते हैं...'

'मधु !... तुम अपने को सम्हाल लो....'

'मैं सम्हल चुकी हूँ नवल !—मुझे दुःख है कि मेरी अस्थिरता से तुम्हें भी चोट पहुँची... चोट अधिक आई हो तो कल दिन के उजाले में मुझसे थोड़ा-सा मरहम लगवा लेना...' हल्की-सी मुस्कान खेल उठी मधु के होठों पर ।

'मरहम की आवश्यकता नहीं मधु....अभी और बैठोगी यहाँ ।'

'नहीं'—मधु ने कहा—'अब सोने की इच्छा करती है...सर भी कुछ भारी हो रहा है....तुमको भी जगा रखा मैंने इतनी देर तक... सुबह तुमको वसूली के लिए धानपुर जाना है न ?'

'ओह, मैं तो भूल ही गया था...देख लेना, मुन्शीजी तारों के रहते ही हवेली आ पहुँचेंगे ।'

'चलो नवल ठाकुर ! एक-दो घण्टे तो नींद ले लो...'

दोनों उठ खड़े हुए ।

● ●

हवेली का बड़ा-सा फाटक रात के समल बन्द रहता है, केवल बीच की छोटी खिड़की लठैतों के आने-जाने के लिए खुली रहतीं है। फाटक पर सात-आठ लठैतों का पहरा रहता है। चोर-डाकुओं की मजाल नहीं कि कहीं से भीतर घुस सकें।

बड़े फाटक का बड़ा-सा गैस सबेरा होते देख सो गया है। चारों ओर मद्धिम अन्धेरा फैला हुआ है। लठैत रात भर जागने के कारण सबेरे की ठण्डी हवा में मीठी खुमारी ले रहे हैं।

'लपट्टू...ओ लपट्टू!...' फाटक के एक लठैत ने दूसरे को जगाया, साथ ही तीन-चार लठैत और जाग पड़े।

'क्या है नरायन ?....' सब ने एक साथ ही प्रश्न कर डाला।

'चुपचाप लेटे रहो और उधर देखो...हिलो मत जरा भी... कोई चोर है साला!....क्या मस्तानी चाल से धीरे-धीरे आ रहा है ?...' नरायन लठैत ने कहा।

सब उधर ही देखने लगे।

चोर को इनके जागने की खबर न थी। वह तो समझता था कि सबेरे की मीठी हवा लठैतों को बेखबर कर देती है और उसी समय हवेली में चोरी की जा सकती है।

चोर पास आता जा रहा था। हलके अन्धेरे में उसकी आकृति कुछ-कुछ स्पष्ट हो चली थी। लठैत लेटे ही लेटे आक्रमण की तैयारी कर चुके थे। चोर फाटक के पास आ पहुँचा।

उसने सोने का बहाना किए हुए लठैतों पर दृष्टि डाली फिर आप ही आप बुदबुदाया—'अभी सोये ही हैं शैतान...पहरा क्या देते हैं, मुर्दों से भी बाजी मार ले जाते हैं...'

चोर ने फाटक की छोटी-सी खिड़की खोली और भीतर घुसने के लिए उसने खिड़की में अपना सर डाला ही था कि

तड़-तड़-तड़ ! लठैत टूट पड़े। लात घूँसे सावन-भादों की तरह झमाझम बरसने लगे। चोर पकड़ लिया गया। फाटक का बड़ा-सा घण्टा जोर से टनटना उठा। खतरे का घण्टा सुनकर हवेली से भी कई लठैत दौड़े आये।

'अरे उल्लू के पट्ठों !'—चोर चिल्लाकर बोला—'सबेरे-सबेरे ही हाथ की कसरत करने लगे....एक-एक की नाक काट डालूंगा, क्या कहते हैं अपनी कलम से...'

'अरे मुन्शी सरकार !....आप ?...'

सब लठैत उन्हें छोड़ अलग खड़े हो गये हाथ जोड़कर।

नरायन ने हाँफते हुए मुन्शीजी को गोद में उठाकर अपनी चारपाई पर ला बिठाया। कोई उनका पैर दबाने लगा, कोई पीठ, कोई हाथ। मुन्शीजी क्रोध से बोले—'क्या कहते हैं, आज बड़े राजा से कहकर तुम लोगों की खाल खिंचवा लूँगा...तुम लोग मुझे समझते क्या हो ?....हाथ से गदहों की तरह दुलत्ती झाड़ते हो....'

'हमने पहचाना नहीं मुन्शी सरकार ! क्षमा कर दो....कान पकड़ते हैं...'

'कान पकड़ो चाहे, क्या कहते हैं नाक ! मैं आज तुम लोगों को ठीक करके ही रहूँगा....तुम लोग हरामखोर हो। इतना खा लेते हो कि आँख में चर्बी छा गई है। किसी को पहचान नहीं सकते, क्या कहते हैं, कुछ देख नहीं सकते....तुम लोग अन्धे हो गये हो अन्धे.... क्या कहते हैं अपने बाप तक को पहचान नहीं पाये...'

'बड़ी गलती हुई सरकार !....जो चाहे दण्ड दे लो मुन्शी बाबू मगर हमारे पेट पर लात मत चलाओ....हम मर जायेंगे हजूर !... हम कान पकड़कर उठते-बैठते हैं....' सभी लठैत एक लाइन में खड़े होकर कान पकड़कर उठने-बैठने लगे।

मुन्शीजी कुछ आश्वस्त हुए।

बोले—'ठीक है....क्या कहते हैं...उठते-बैठते चलो....'

'गिनते जाओ मुन्शी सरकार!....' नरायन बोला—'दुहाई मुन्शी बाबू की, पूरी एक सौ बैठक लगायेंगे हम लोग...'

'ठीक है, उठते-बैठते चलो, गिनने की कोई जरूरत नहीं....'

'अरे लपट्टू, आज कैसी कसरत हो रही है, सबेरे-सबेरे!'—नरायन दूसरे लठैत से बोला—'बीवी की नथ की कसम! मुन्शी सरकार ने आज निहाल कर दिया हम लोगों को....'

'पूरा गधा है गधा....' धीरे से बोला लपट्टू!

मुन्शीजी के कानों में भनक पड़ गई। बोले—'यह बेदुम का गधा लपट्टू क्या बोल रहा है जी?....क्या कहते हैं, गाली बक रहा है सूअर का छौना?'

'अरे नहीं मुन्शी बाबू!....कह रहा है....सबेरे-सबेरे किस गधे का मुँह देखकर उठे थे हम लोग, जो इतनी कसरत करनी पड़ी....' बोला नरायन।

'यह लपट्टू लुच्चा है....क्या कहते हैं....मुँह तो मेरा ही देखा था सबेरे-सबेरे तुम सब लोगों ने....'

'अब छमा कर दो मुन्शी सरकार!....बिलकुल थक गये हम लोग...आपके सलोने चश्मे की कसम मुन्शी बाबू!....'

'चश्मा!....अरे मेरा चश्मा क्या हुआ?'—मुन्शीजी अपनी नाक टटोलने लगे—'अरे बेईमानों! दौड़कर उधर खोजो मेरा चश्मा....क्या कहते हैं, इन गधों ने नाक में दम कर दिया...'

बैठक बन्द कर लठैत मुन्शीजी का चश्मा हेरने लगे। थोड़ी देर के बाद जमीन पर गिरा हुआ चश्मा मिला मगर उसका एक हाथ टूट गया था। देखकर मुन्शीजी भभक पड़े—'अब इसे क्या कहते हैं, नाक पर कैसे पहनूँगा...'

'सरकार! इसमें एक डोरी लगाकर कान में बाँध लीजिये....

अरे लपटू ! जल्दी से डोरी ले आ....ग्रो हिरामन का बच्चा ! मुन्शी बाबू के लिए एक चिलम तमाखू...' नरायन ने चिल्ला-चिल्ला कर सबको ग्राज्ञा दी।

आध घण्टे बाद ! तमाखू पी, डोरी के सहारे कान से चश्मा बाँधे मुन्शीजी हवेली में दाखिल हुए। नवल सो रहा था।

मुन्शीजी कमरे के दरवाजे पर खड़े होकर पुकारने लगे—'छोटे राजा ! ओ छोटे सरकार ! उठिये न, या सोते ही रहियेगा यस सर !....क्या कहते हैं, सबेरा हो गया...'

तब तक ग्रपने कमरे से मधु आ पहुँची।

'ग्रा गये मुन्शी काका ?....'

'हाँ बिटिया !....जरा यस सर को जगा दे....सर पर सूरज चमकने लगेगा तो क्या कहते हैं नाक में पसीना ग्रा जाएगा चलते-चलते...'

'मैं भी चलूँगी मुन्शी काका !....' मधु आजिजी के साथ बोली।

'कहाँ ?...ह्वेयर ?....'

'तुम लोगों के साथ...थोड़ा-सा घूमने से कुछ जी ही बहल जायगा मेरा...'

'भाई, क्या कहते हैं...चलने के पहले तुम ठकुराइन से पूछ लो...बड़े राजा को तो मैं समझा ही लूँगा।'

'ग्रच्छा तो मैं माँ से पूछने जाती हूँ....तुम जाकर नवल ठाकुर को जगा लो...' कहकर मधु ठकुराइन के कमरे में आई।

ठकुराइन उठकर राम-राम जप रही थीं।

'माँ !....एक बात पूछूँ ?...'

'पूछ न...नवल के साथ घूमने जाना चाहती होगी....'

'हाँ, वे धानपुर जा रहे हैं न...'

'जा, मेरे रोकने से नवल मानेगा भी नहीं....उसी ने तो तुझे साध दिलाई होगी...'

'नहीं माँ....मैं खुद ही घूमना चाहती हूँ...तो तैयारी करूँ न....'

'कर ले...' कहकर ठकुराइन पुनः राम-नाम जपने में तल्लीन हो गईं।

उधर!

नवल की पलंग के पास बैठे हुए मुन्शीजी उसे जगा रहे थे।

'अरे सरकार! क्या कहते हैं सात बज रहे हैं...रात को नींद नहीं आई तो दिन में सोने से जी नहीं भरेगा यस सर!....'

एक घण्टे में ही नवल तैयार हो गया।

मुन्शीजी को लेकर बाहर आया तो उसके लिए घोड़ा तैयार था और मुन्शीजी तथा लठैतों के लिए बैलगाड़ी।

एक पालकी भी थी, जिस पर पर्दा पड़ा था और चार कहार मुस्तैद खड़े थे।

'पालकी में कौन है?' नवल ने पूछा।

मधु पालकी का पर्दा जरा-सा उठाकर बोली—'मैं हूँ नवल ठाकुर।'

'तुम?....कहाँ चल रही हो मधु?....'

'घूमने....' बोली मधु—'ले चलोगे न अपने साथ?....'

'नदी तो बाँध बनाकर रोकी भी जा सकती है, परन्तु नारी को कौन रोक सकता है?...माँ से पूछ लिया है न?'

'हाँ....'

'तो चलो...' उछल कर नवल घोड़े पर जा चढ़ा। हृष्टपुष्ट घोड़ा हिनहिनाया फिर चल पड़ा।

पालकी और बैलगाड़ी भी रवाना हुई। नवल धीरे-धीरे साथ चलने लगा। बीते हुए दिनों की तरह बस्ती पीछे छूट गई। साँप के लीक-सी पगडण्डी दूर तक दिखाई देती रही।

आस-पास के खेतों में किसान खून का पसीना बहा रहे थे।

तितलियों-सी चपल बालायें निरवाही कर रही थीं। कहीं भैंस चर रही थीं, कहीं गायें रँभा रही थीं और कहीं बछड़े कूद रहे थे, हर्षोत्फुल्ल होकर। मधु ने पालकी का पर्दा उठा दिया था और चारों ओर का मनोहर दृश्य देखती चल रही थी।

आँखें निहाल थीं और हृदय गदगद्।

गाँव की एक-एक चीज बेहद प्यारी लग रही थी मधु को।

'नवल ठाकुर !....' पुकारा उसने।

'क्या है मधु ?....है क्या ?....'

'यह पालकी तो जेल-सी लग रही है...' मधु ने कहा—'तुम आकर इसमें बैठो और मुझे अपने घोड़े पर चढ़कर चलने दो....'

नवल हँसा, बोला—'कभी घोड़े पर चढ़ी भी हो या यों ही....'

'घोड़े पर चढ़ना कोई बहुत कारीगरी का काम तो है नहीं.... तुम चढ़ा दोगे तो बैठी चलूँगी....गिर न सकूँगी, इसे निश्चय जानो....'

'चुप रहो मधु !—' कहा नवल ने—'मेरे हाथ में यह घोड़ा जितना सीधा लग रहा है, दूसरों का हाथ लगते ही यह उतना ही उदण्ड हो जाता है...समझदार तो है बहुत, मगर शैतान भी कम नहीं है....सिवा मेरे और किसी की सुनता ही नहीं....इसका नाम है टीपू ! मेरी तो हर बात समझ लेता है, मगर दूसरों को गर्दन पर हाथ भी नही रखने देता।'

'मुझे घुड़सवारी और बन्दूक चलाना सिखा दो तो देखो मैं तुम्हारे साथ कैसा शिकार खेलती हूँ....'

तभी मधु के कानों में एक मीठा गायन स्वर आ समाया। पास के खेतों में निरवाही करनेवाली युवतियाँ अलाप रही थीं—

'कहाँ से घटा उमड़इले कहाँ जल बरिसे हो,
पूरब घटा उमड़इले पछिम कल बरिसे हो,

खोल पिया सुवरन केवड़िया अकेलो डर लागे हो,
उढ़ाव राजा लाली रजइया करेज मोर काँपे हो....'

'इन गीतों में कितना आकर्षण है नवल ठाकुर !....'

'तुम्हें आकर्षण मिलता होगा—' बोला नवल—'मैं तो रात-दिन सुनते-सुनते अभ्यस्त हो चला हूँ...'

'इन ग्राम्य-गीतों में कवित्व भले ही न हो, हृदय को स्पर्श कर जानेवाली मधुर रागिनी तो है....इनकी प्रशंसा कौन नहीं कर सकता ?....सुनो नवल ठाकुर सुनो...'

'जनिया मत खोलू खिरकिया अइली सावन की बहार !....'

'तुम्हीं यह सब सुनो मधु !....अभी किसी अहीर का बिरहा सुन लो तो लजाकर अपने कान बन्द कर लोगी तुम...'

'बिरहा क्या है ?....'

पुरुषों द्वारा गाया जानेवाला एक ग्राम्य-गीत....लो, सुन ही लो अब तो....वह देखो, अहीर का छोकरा कानों पर हाथ रखे तान खींच रहा है...' बोला नवल।

अमवा के लागेला टिकोरवा रे सखिया गुलरि फरेले हड़फोर,
गोरिया के उठलें हो छाती के जोबनवाँ पिया क खेलौना रे होइ !'

'यह तो बड़ा गन्दा है नवल ठाकुर !....' दातों तले आँचल दबाकर हँसती हुई मधु बोली।

'तुम इसे गन्दा कह सकती हो, मगर ये अशिचित तो इसे अपने माँ-बाप के सामने भी गाते हैं....देखो धानपुर आ गया अब, थोड़ी ही दूर है...'

धानपुर सहिजनवाँ जागीर का एक छोटा-सा गाँव है। ठाकुर की एक कोठी भी है, जहाँ चार-पाँच लठैत हमेशा रहा करते हैं।

नवल को आते देखकर लठैतों ने लम्बी जुहार की।

नवल, मधु तथा मुन्शीजी बैठक में आ बैठे।

वसूली का समाचार पाते ही किसान अपने लगान के रुपए ले-लेकर आने लगे। तीसरे पहर तक वसूली होती रही।

मधु बोली—'नवल ठाकुर! मैंने तो कुछ घूमा-फिरा ही नहीं...'

'रास्ते भर क्या करती आई?...अब तो हवेली लौटने का समय हो गया...बड़े राजा नाराज होंगे...'

'मैं घोड़े पर चढ़ूँगी...'

'घोड़ा बदमाश है मधु! तुम सँभाल नहीं पाओगी इसे...'

'तुम पकड़े रहना, मैं सँभल जाऊँगी'—मधु ने हठ किया।

'अच्छा आओ....' नवल घोड़े पर से उतर पड़ा। उसने मधु को घोड़े पर बैठा दिया। घोड़ा हिनहिना उठा, नवल बोला—'खामोश रहो टीपू, नहीं तो हन्टर की मार याद रखो....'

घोड़ा कुछ शान्त हुआ। मधु ने लगाम पकड़ ली दाहिने हाथ से। नवल भी लगाम पकड़े रहा। धीरे-धीरे घोड़ा आगे बढ़ा, पीछे-पीछे मुन्शीजी की बैलगाड़ी भी चल पड़ी।

'छोटे राजा।' मुन्शीजी बोले—'क्या कहते हैं...मधु बिटिया सँभल गई है...उसे छोड़ दो और तुम भी आकर बैलगाड़ी पर बैठ जाओ....'

'टीपू की बदमाशी तुम जानते हो मुन्शीजी!....' बोला नवल।

'मुझे छोड़ दो नवल तुम! मैं गिरूँगी नहीं...'

नवल ने घोड़े की लगाम छोड़ दी और बैलगाड़ी की ओर चला। तभी मधु ने एक हल्की-सी एँड़ घोड़े को लगाई।

घोड़े ने कान खड़े किये, मधु ने चीखकर घोड़े की गरदन दोनों हाथों से पकड़ ली। नवल समझ गया कि घोड़े का मिजाज बिगड़ना चाहता है। वह बैलगाड़ी पर से कूदकर तेजी से घोड़े की ओर दौड़ा, मगर तब तक...तब तक घोड़ा चीखती-काँपती मधु को लिए तूफान की तरह सामने की ओर भाग चला।

नवल चिल्लाता रहा—'टीपू रुको...रुको... टोपू...'

मगर देखते-देखते घोड़ा आँखों से ओझल हो गया। नवल हाथ मलता हुआ बोला—'गाँव में कोई घोड़ा मिल सकेगा मुन्शीजी ? मैं पीछा करूँगा...शैतान ले जाकर मधु को जाने कहाँ पटक दे...'

'गाँव में टट्टू मिल सकते हैं सरकार ! ऐसा तेज घोड़ा किसके पास मिलेगा ?...'

'उफ् ! मैं क्या करूँ ?...बड़े राजा क्या कहेंगे ?...माँ को क्या जवाब दूँगा...'

मधु का इस तरह विपत्ति में पड़ना नवल के लिए असह्य था। सालों से नवल के हृदय में प्यार की मधुर अनुभूति भरती आ रही थीं मधु—आज वही उसकी आँखों के सामने से इस प्रकार दूर हो गई थी कि उसको बचाने के लिए नवल छटपटा कर भी कुछ कर नहीं सकता था।

● ●

बजगवाँ का प्राचीन नाम व्रजग्राम था। बेचारा बदलते-बदलते इतना बदल गया कि जहाँ दो चार पुश्त पहले दूध की नदियाँ और सोने के पहाड़ थे, वहीं अब केवल एक छोटी-सी जागीर-मात्र रह गई है। मुर्दे के शरीर में जिस प्रकार साँस की गति खोजे नहीं मिलती, उसी प्रकार बजगवाँ की जागीर भी अपनी आखिरी घड़ियाँ गिन रही है। बजगवाँ के बगल में एक सीधी-सादी पगडंडी सीधे दक्षिण की ओर चली गई है, उसी पर एक घुड़सवार खड़ा है। घुड़सवार युवक, सुन्दर और अच्छे वस्त्रों से सुशोभित किसी अमीर घराने का लगता है। नीचे जमीन पर एक अधेड़ व्यक्ति खड़ा है, जो शायद उसका कोई मुसाहब है।

'चलो घनश्याम !....थोड़ी दूर तक और सैर कर लें—'

घुड़सवार ने अपने मुसाहब से कहा और घोड़ा आगे बढ़ाया।

घोड़ा धीरे-धीरे चला और घनश्याम साथ-साथ पैदल।

दोनों कुछ दूर तक चुपचाप चलते गये।

'घनश्याम !...जागीर का काम कितनी झंझटों का होता है !'

'आप ठीक कहते हैं गरीब परवर !...'

'पिताजी के मरते ही सारा काम मेरे कमजोर कन्धों पर आ रहा और मेरी अनुभवहीनता से सभी ने फायदा उठाया... आज जागीर मिटने-मिटने-सी हो रही है....पास की दूसरी जागीर सहिजनवाँ को देखो....दिन पर दिन स्वर्ग बनती जा रही है वह... ऐसा कैसे हो सकता है ? अपनी जागीर को कौन नहीं खुशहाल बनाना चाहता ?...मगर लाख कोशिश करने पर भी मैं कुछ कर नहीं पाता...कभी-कभी सोचता हूँ, सारा पुश्तैनी बैर-भाव भूलकर ठाकुर रामकिशोर सिंह से कुछ शिक्षा ग्रहण करूँ...वे बुजुर्ग हैं, हमारे यहाँ से उनकी दुश्मनी भी गहरी है, फिर भी यदि मैं उनकी शरण में जाऊँ तो वे दुत्कार नहीं सकेंगे घनश्याम !...'

घनश्याम ने चौंककर उसकी ओर देखा—'यह आप बोल रहे हैं सरकार !....आप ?...बजगवाँ के जागीरदार ठाकुर राजीवलोचन सिंह के मुख से ऐसे वाक्य निकल रहे हैं ?...'

'हाँ घनश्याम !...मैं इस दुश्मनी का अन्त कर देना चाहता हूँ...हमारे पूर्वजों में शत्रुता थी...हमने तो एक दूसरे का कुछ नहीं बिगाड़ा...यह दुश्मनी मेरे बदन में कोढ़ जैसी पीड़ा दे रही है, इसके दूर करने की दवा खोजनी होगी...' लोचन बोला।

'आप में जवानी है सरकार, हौसले भी हैं, हुनर और गुण सभी कुछ हैं....आप जो भी करेंगे उसमें हमारा हित ही होगा...'

'घनश्याम !...यह कैसी आवाज अभी आई...'

घनश्याम ने चारों ओर देखा, फिर बोला—'कुछ तो नहीं ठाकुर ! कैसी आवाज आपने सुनी ?...'

'किसी लड़की के चीखने की...यह देखो, फिर...सुना तुमने घनश्याम ?'

'अभी-अभी इधर से आवाज आई है सरकार !'—घनश्याम उसी ओर देखने लगा, एकाएक चौंककर चिल्लाया—'वह देखिये ठाकुर... उधर नहीं, उस तरफ सरकार ! . एक घोड़ा दौड़ा आ रहा है, तीर की तरह पागल जैसा, एक लड़की उसकी गर्दन से लिपटी है, चीख रही है, खुले बाल हवा में फहरा रहे हैं....'

लोचन ने अपना घोड़ा रोक दिया।

थोड़ी देर तक देखकर बोला—'घोड़ा बिगड़ गया है घनश्याम ! लड़की नौसिखुआ है....बच नहीं सकती....'

'इसे बचा लो सरकार !....' घनश्याम प्रार्थनापूर्ण स्वर में बोला।

'मैं सोच रहा हूँ...घनश्याम ! तुम कोठी चले जाओ और दो-तीन आदमियों को लेकर घोड़े का पीछा करो....मैं भी इसके पीछे जाता हूँ, देखूँ क्या कर सकता हूँ....'

'इस बन्दूक से घोड़े की टाँग जख्मी कर दीजिये ठाकुर !....भाग नहीं सकेगा ज्यादा दूर तक....' घनश्याम ने अपने कन्धे की बन्दूक उतारते हुए कहा।

'कहीं गोली खाकर घोड़ा लड़खड़ा कर गिरा तो लड़की की जान गई ही समझो ...तुम कोठी जल्दी दौड़ जाओ....'

घनश्याम दौड़ गया। तभी वह तूफानी घोड़ा उस चीखती-चिल्लाती लड़की को लिए सामने से तीर की तरह गुजर गया।

लोचन ने अपने घोड़े को एँड़ लगाई। मजबूत घोड़ा उस घोड़े के पीछे भाग चला। लोचन का घोड़ा काफी तेज था और वह तूफानी घोड़ा इतनी दूर से दौड़ते आने के कारण थक चला था, अतः बीच का फासला तेजी से कम होने लगा।

अब लोचन एकदम नजदीक पहुँच चुका था। चिल्लाकर उस

लड़की से बोला—'घबड़ाना मत, मैं आ गया हूँ... घोड़े की गरदन ठीक से पकड़े रहो....'

लड़की का चीखना अब बन्द हो गया था। शायद वह बदहवास हो चली थी या बदहोशी के नजदीक पहुँच रही थी।

लोचन ने अपना घोड़ा दूसरे घोड़े की बगल में कर लिया। दोनों घोड़े समानान्तर भागते रहे। धीरे-धीरे लोचन अपना घोड़ा दूसरे घोड़े के नजदीक करता जा रहा था।

लड़की शायद बेहोश हो चली थी और घोड़े पर से गिरना ही चाहती थी कि लोचन ने फुर्ती से हाथ बढ़ाकर उसकी कलाई पकड़ ली और धीरे से अपनी ओर खींचा। खींचते ही उस लड़की का शरीर उस घोड़े पर से नीचे झूल पड़ा। लोचन ने अपना पैर आगे कर उसे जमीन पर गिरने से रोका और दूसरे हाथ से उसकी कमर पकड़ कर अपने आगे बिठा लिया।

बेहोश लड़की का शरीर लोचन के हाथों के बीच पड़ा रहा। लोचन ने अपना घोड़ा रोका, फिर उसे पीछे लौटाया। उसने अपने शरीर के सहारे टिकी उस बेहोश लड़की पर नजर डाली।

जैसे उस लड़की को बचाकर वह स्वयं ही उस हवाई घोड़े पर उड़ा जा रहा हो, ऐसा लगा उसे। सौन्दर्य की एक सीमा होती है। ईश्वर की दी हुई हर चीज सीमाबद्ध होती है—परन्तु यहाँ तो सौन्दर्य असीम था, सीमाहीन !

तभी घनश्याम घोड़े पर चढ़ा आता दिखाई पड़ा—'बचा लाये सरकार ! बधाई...' बोला वह।

'बड़ी मुश्किल से बचा पाया हूँ घनश्याम ! चलो, कोठी चलो....'

बजगवाँ की कोठी उतनी शानदार नहीं, फिर भी उसे देखकर ठाकुरों की प्राचीन गरिमा का दृश्य सामने आ जाता है। लोचन ने घोड़े से उतरकर उस लड़की को उतारा और उसे गोद में लिए अपने कमरे में आया। धीरे से उसने उसे पलंग पर सुला दिया।

'घनश्याम दौड़कर अलगू शास्त्री को बुला लाओ ...' उसने कहा।

'अभी आया सरकार !....' घनश्याम चला गया।

अलगू शास्त्री बजगवाँ के वैद्य थे। मशहूर दूर-दूर तक। नीम हकीम तो थे, मगर खतरे जान नहीं।

'अचला ! ओ अचला !...पुकारा लोचन ने।

'चिल्लाओ मत भैया ! मैं तो यह पीछे ही खड़ी हूँ...' पीछे खड़ी हुई एक युवती ने आकर कहा।

'तू यहीं है !...छिपकली को तरह छिपी रहती है कि पता ही नहीं चलता...मैं भी कितना बदहवाश हो गया हूँ कि कुछ दिखाई भी नहीं पड़ता....'

'अब क्या दिखाई पड़ेगा भैया !...आँखों में बिजली चमक जाय और कोई देख सके, दिल में चाँद उगे और कोई होश में रहे ?.... राम-राम !....'

'देख रामायण मत सुना...दौड़कर झट से एक गिलास पानी ले आ...'

'क्या करोगे...पियोगे ! प्यास लगी है न ?....'

'अरी सूअर, इसके मुँह पर छींटे दूँगा, बेहोश है जो !....' लोचन ने खीझकर कहा।

'तुम तो होश में रहते हुए भी बेहोश हो चले हो भैया ! अपने मुँह पर छींटे देना पहले ...पसीना भरभरा आया है कितना...'

'तू जाती है या नहीं ?...'

'लो चल दी....मुझे तो काट खाने दौड़ते हैं और दूसरी लड़कियों को बेहोशी में भी पकड़ लाते हैं जैसे मैं बहन न होकर इनकी भाई हो गई जो मुझसे इतना जलते हैं कि इनका राज-पाट बँटा लूँगी.... माँ !...ओ माँ...' पुकारती हुई पन्द्रह की अचला नौ-दो ग्यारह हो गई !

'क्या है अचला !...' ठकुराइन माँ का स्वर सुनाई पड़ा।

'माँ ! लोचन भैया नऽ, एक लड़की पकड़ लाये हैं जङ्गल से.... बेचारी उन्हें भूत समझ कर बेहोश हो गई है...'

बेहोश लड़की को देखकर ठकुराइन उसके पास आ गयीं। पूछा उन्होंने—'यह कौन है लोचन ?...कहाँ पा गया इसे तू....'

'पता नहीं कौन है माँ...पहले मुझे साँस लेने दो, बाद में बताऊँगा....' बोला लोचन।

'लो भैया, लो....जल्दी खाली करो, दूसरी गिलास लाऊँ एक गिलास पानी में तुम दोनों के मुँह पर छींटे नहीं दिये जा सकते...' पानी का गिलास देती अचला बोली।

लोचन पानी लेकर लड़की के मुँह पर छींटे देने लगा। तभी अलगू शास्त्री पधारे। कद के नाटे, बदन पर मिर्जई, हाथ में बाँस की छड़ी और आँखों में 'अहं ब्रह्मास्मि' का भाव लिए अलगू शास्त्री किसी असफल चित्रकार के कार्टून से लग रहे थे।

'क्या है ठाकुर राजीवलोचन सिंह ?....है क्या ?....' पूछते-पूछते अलगू शास्त्री की आँखें कमरे में उपस्थित सभी लोगों के चेहरों पर सचलाइट-सी दौड़ गयीं।

'यह लड़की घोड़े पर से बेहोश उतारी गई है शास्त्री जी !...' लोचन ने कहा।

'सिर्फ एक मिनट में इसे होश में ला देता हूँ...लाओ मेरा बक्स !...'

घनश्याम ने उनका बक्स खोलकर उनके सामने रख दिया।

शास्त्रीजी ने कोई दवा पानी में घोलकर लड़की के कानों में डाली और नाक में कोई बुरादा सुँघाया।

'आक्छीं !....' अचला ने छींका तो लोचन ने दौड़कर उसकी नाक पकड़ ली।

'अपनी नाक बन्द कर लो बेटी !....' शास्त्रीजी बोले—'यह दवा ऐसी है कि नाक में जाते ही मुर्दे भी छींक उठते हैं !...'

'आक्छीं !' इस बार उस लड़की ने छींका।

'अब ठीक है....कुछ देर बाद होश में आ जायगी...इसके सर पर पानी के छींटे देते रहो....' कहते हुए शास्त्रीजी उठ खड़े हुए।

तभी एक लठैत ने आकर धीरे से लोचन के कान में कुछ कहा। लोचन चौंक पड़ा, बोला—'क्या कह रहा है तू ?...'

'मैं सच कह रहा हूँ सरकार !...मैं उन्हें पहचानता हूँ...'

'तू उन्हें बैठक में बिठा...मैं अभी आता हूँ...देख, इज्जत के साथ बिठा...' लोचन कुछ घबड़ा-सा गया था।

शास्त्री जी चले गये तो ठकुराइन पास आकर बोलीं—'कौन आया है लोचन ?'

'.......' लोचन ने धीरे से कुछ कहा।

सुनकर ठकुराइन भी आश्चर्य में पड़ गईं !

'अचला !...' लोचन बोला—'तू इसे देखती रह...मैं अभी बैठक से होकर आता हूँ...'

'किससे मिलना है भैया ?'

'किसी से भी नहीं...'

'भूठ क्यों बोलते हो ?...मैंने सुन लिया है...सहिजनवाँ के छोटे राजा आये हैं न...' अचला हँस कर बोली।

'लोचन !...' जाते हुए लोचन को ठकुराइन ने रोका—'तू होशियार रहना...दुश्मन का कौन ठिकाना...मैं लठैतों को तैयार रहने को कह देती हूँ...'

'माँ वह अकेला आया है, निहत्था !...' कहकर लोचन बाहर चला गया। ठकुराइन कुल देवता का स्मरण करने लगीं।

तभी उस बेहोश लड़की की पलकें खुलीं और उसने सामने ताख पर ब्रह्मा-विष्णु-महेश की एक बड़ी-सी त्रिमूर्ति देखी।

● ●

धानपुर की कोठी पर अजीब हँगामा मचा हुआ था। बदमाश घोड़े की तलाश में चारों ओर लठैत जा चुके थे और निराश हो वापस लौट आये थे। बेचारे ग्रामीण भी परेशान थे, परन्तु न तो कहीं उस घोड़े का पता लग रहा था और न मधु का।

नवल ने मुन्शीजी को सहिजनवाँ भेज दिया था ताकि वे हवेली में इस दुर्घटना की खबर दे दें।

नवल की मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी। मधु के लिए वह बहुत व्यग्र था। हाथ में हण्टर लिए बेचैनी से इधर से उधर टहल रहा था। तभी उसने देखा, दूर पर उसका घोड़ा चला आ रहा है। वह उछल पड़ा...मधु तो सकुशल है। कुछ हुआ तो नहीं उसे। परन्तु घोड़े की पीठ खाली थी। मधु दिन के तारे की तरह गायब हो गई थी।

घोड़ा पास आकर खड़ा हो गया। नवल ने लपक कर उसकी लगाम पकड़ ली। हाथ का हण्टर प्रबल वेग से घोड़े पर पड़ने लगा, अबाध गति से, सटाक ! सटाक ! घोड़े की पीठ पर कई जगह से लहू झाँकने लगा। छटपटाने लगा घोड़ा।

'बेईमान !...तू उसे कहाँ पटक आया ?...' नवल चिल्ला उठा।

घोड़ा क्या कहे, उसके पास जबान तो थी, परन्तु भाषा नहीं।

हण्टर चलता रहा, घोड़ा छटपटाता रहा।

'ले चल मुझे उसके पास—' नवल ने कहा और उछलकर उसकी पीठ पर जा चढ़ा। कई हण्टर पुनः चलाया उसने—'तूफान की तरह ले चल मुझे उस जगह, जहाँ तू उसे पटक आया है...याद रख अगर वह मर गई तो तेरी जान को खैर नहीं...'

घोड़े ने कुछ समझा कि नहीं, कौन जाने, मगर नवल को लेकर खूब तेजी से भाग चला।

नवल का हण्टर अब भी रुका न था। वह घोड़े को बराबर याद दिला रहा था कि उसने बहुत बड़ी गलती कर डाली है।

नवल जानता था कि उसका यह घोड़ा औरों से अधिक समझदार है और वह उसे उस स्थान पर अवश्य ले जायगा। वह यह भी समझता था कि यदि मधु कहीं डर कर अपने से गिरी न होगी, तो घोड़े ने उसे किसी ऐसी जगह न गिराया होगा, जहाँ उसकी जान जाने का खतरा हो।

एकाएक घोड़ा सहिजनवाँ की जागीर छोड़कर बजगवाँ की जागीर में दाखिल हुआ। नवल चौंक पड़ा, परन्तु उसने घोड़े की गति में बाधा न डाली। दस मिनट बाद ही घोड़ा उस स्थान पर आ खड़ा हुआ, जहाँ लोचन ने मधु को उतारा था।

नवल समझ गया कि मधु यहीं कहीं गिरी है।

वह नीचे उतर पड़ा और दौड़-दौड़कर चारों ओर देखने लगा। परन्तु मधु का कहीं पता न चला।

धूल भरी पगडण्डी पर नवल की दृष्टि पड़ी। कई घोड़ों के पैरों के निशान देखता हुआ वह आगे बढ़ा।

घोड़ों के पैरों के निशान बजगवाँ की कोठी की ओर मुड़ गये थे।

नवल ठिठक गया। सोचने लगा, दुश्मन के पास क्या खाली हाथ जाना ठीक होगा? मगर मधु की चिन्ता ने उसे व्यग्र कर रखा था। थोड़ी ही देर बाद वह कोठी के सामने था।

दरवाजे पर खड़ा हुआ लठैत उसे देखकर चौंक पड़ा। वह नवल को अच्छी तरह पहचानता था। दोनों जागीरों की प्राचीन शत्रुता उसे ज्ञात थी। उसने आगे बढ़कर अदब से जुहार किया, फिर बोला—'आइये सरकार! धन्न भाग हमारे!...ओ धन्नू! ठाकुर को खबर कर दे...सहिजनवाँ के छोटे राजा पधारे हैं....'

धन्नू नाम का लठैत कोठी के भीतर चला गया ! पहले लठैत ने नवल को [redacted] बैठक में ला बिठाया।

नवल ने उड़ती नजर से बैठक को देखा, खूब सजा था। वह बैठा नहीं, हाथ में हण्टर लिए चहलकदमी करता रहा।

लठैत बाहर चला आया और गुप्त रूप से दस-बारह लठैतों को बैठक के चारों ओर पहरे पर तैनात कर दिया। पता नहीं दुश्मन का मिजाज कब बिगड़ उठे ?

थोड़ी ही देर बाद भीतर से किसी के आने की आवाज आई।

और दूसरे ही क्षण दो पुश्तैनी दुश्मन आमने-सामने खड़े थे।

'ओहो, किस्मत जग उठी हमारी तो....नवल ठाकुर ! कैसे भूल पड़े भाई !....' फिर आगे बढ़कर नवल से हाथ मिलाया और उसके न चाहते हुए भी उसने उसे बाहों में भरकर सीने से लगाया।

नवल हंस न सका, गम्भीर बना रहा।

'बैठो छोटे राजा !...' कहकर लोचन ने नवल का कंधा पकड़ कर आग्रह से बिठाया। फिर पुकार कर बोला—'ओ अचला !.... मेहमान आये हैं। एक गिलास शर्बत बना ला जल्दी...'

'राजीवलोचन ठाकुर !...' बोला नवल तेज स्वर में—'मैं मेहमानी करने नहीं आया....पूर्वजों का कुछ ख्याल हो तुम्हें तो दुश्मन को शर्बत पिलाने की बात छोड़ो...'

'इतनी दूर से आये हो नवल ठाकुर !....प्यास तो लगी ही होगी !...'

'लगी है जरूर !....' नवल क्रोधित था—'पिला सकते हो अपने खून का शर्बत मुझे ?...'

'हाजिर है छोटे राजा !' बोला लोचन गम्भीर स्वर में—'इंसान के खून को अगर तुम्हारी जीभ शर्बत का दर्जा दे सके, तो मेरे शरीर का एक-एक बूंद खून तुम्हारे पेट में उतरने को तैयार है.... मँगाऊँ छुरी ?....'

'मैं कायर शत्रु का खून नहीं पीता....'

'हमारे घर आये हो नवल ठाकुर !...सो मेहमानबाजी कर रहा हूँ...चाहे कायर बना लो, चाहे नीच...मगर यह न भूलो कि ठाकुरों का रक्त मेरी नसों में भी है...मेरे स्वागत-सत्कार की चोट यदि तुम्हें लग सकती है तो तुम्हारी कड़ुवी बातों का जख्म भी कुछ कम नहीं हो सकता मेरे दिल पर...खैर जाने दो, बात बढ़ाने से ही बढ़ती है छोटे राजा !....शर्बत नहीं पीना चाहते, न सही...अपने आने का कारण तो बता ही सकते हो ?...' लोचन गम्भीर स्वर में बोला। वह चाहता था कि नवल शान्त हो जाय और किसी तरह इस पुश्तैनी झगड़े की जड़ टूटे।

'मधु नाम की मेरी सहपाठिनी शहर से गाँव घूमने आई थी। मेरा बदमाश घोड़ा उसे ले भागा और तुम्हारी जागीर में पटक गया ..घोड़ों के निशान मुझे यहाँ तक लाये हैं लोचन ठाकुर...'

नवल का स्वर पूर्ववत् तीव्र था। अब लोचन की समझ में आया कि वह लड़की कौन है, जिसकी प्राण-रक्षा उसने की थी।

बोला वह—'तुम शान्त हो छोटे राजा ! अगर मधु इधर कहीं आई होगी तो उसका पता लग जायगा। घबड़ाने की कोई आवश्यकता नहीं...मैं उसकी पूरी खोज करूँगा...तुम आज यहाँ रहो, मेरी मेहमानदारी कबूल करो नवल ठाकुर....'

'तुम मुझे नीचा बनाना चाहते हो, मैं एक क्षण भी यहाँ नहीं ठहर सकता...'

'रुक जाओ नवल ठाकुर !...सच मानो, पुश्तैनी दुश्मनी का भार ढोते चलना अब ठीक नहीं...प्रेम में जो कुछ है उसे शत्रुता से तुम न पा सकोगे...'

'इसका निर्णय देने के लिए बड़े राजा अभी मौजूद हैं, उनसे जाकर कहो तुम ?...बोलो, मधु यहाँ आई है या नहीं ?....'

तभी हाथ में एक गिलास शर्बत लिए लहरों-सी चंचलता अपने

यौवन में छिपाये, आ पहुँची अचला ! नवल से उसकी नजरें मिलीं। गाल ऊषा की तरह लाल-लाल हो उठे, नजरें नीचे झुक गईं।

'लो भैया शर्बत !...' बोली वह, एक-एक शब्द पर अपनी लज्जा का आवरण चढ़ाये।

'शर्बत ले आई तू ?...इनको दे अचला ?...' लोचन ने कहा।

नजरें नीची और हाथ का गिलास आगे किये अचला नवल के सामने आ खड़ी हुई।

'पी लो नवल ठाकुर ! शर्बत....' लोचन ने आग्रह किया।

'तुम्हारा हठ है तो लाओ पी लूं...' कहकर नवल ने अचला के हाथों से गिलास ले लिया और बजाय होठों से लगाने के पूरी गिलास अपने जूते की नोंक पर उड़ेल दिया, फिर तेज स्वर में बोला—'मुझसे अधिक मेरे जूते प्यासे थे...' उठ खड़ा हुआ वह—'याद रहे लोचन ठाकुर ! अगर कल तक मधु हवेली न पहुँची तो परसों तुम्हारी खैर नहीं...सहिजनवाँ का सामना करने के लिए तैयार रहो।'

कहता हुआ वह तेजी के साथ निकल गया। अपना अपमान देखकर लोचन हाथ मलने लगा। पहरेदार लठैतों ने भी अपने ठाकुर का अपमान देखा। वे नवल को रोकने के लिए आगे बढ़े।

लोचन ने उन्हें रोक दिया—'जाने दो उसे...तुम लोग अपने काम पर जाओ...'

नवल बाहर आकर रवाना हो गया।

लोचन व्यग्र होकर बैठक में टहलने लगा।

ठकुराइन कमरे में आकर बोलीं—'क्या हुआ बेटा ?'

'कुछ नहीं माँ—' कहा लोचन ने—'अचला ने उसे शर्बत पीने को दिया तो उसने स्वयं न पीकर अपने जूते को पिला दिया...जरा भी सभ्यता नहीं...नीच कहीं का....'

'जाने दो भैया !...' अचला ने कहा—'उनका मिजाज ठीक

नहीं था...फिक्र छोड़ो उनकी, चलकर अभी मधु की देख-माल करो...'

अब लोचन को मधु की याद आई।

सब उस कमरे में आये तो मधु चारपाई पर उठकर बैठी हुई थी और एकटक उस त्रिमूर्ति को देख रही थी।

लोचन आदि को देखकर वह उठ खड़ी हुई।

'लेटी रहो, अभी कमजोरी बहुत है...' लोचन ने कहा।

'मैं ठीक हूँ...आप लोग कौन हैं...मैं कहाँ हूँ...' मधु बोली।

'तुम बजगवाँ में हो बेटी ?'—ठकुराइन ने कहा—'यह मेरा बेटा लोचन है और यह मेरी बेटी अचला !...'

'सहिजवाँ यहाँ से कितनी दूर है ?' पूछा मधु ने।

'नवल ठाकुर की याद आ रही है क्या मधु ?...' अचला बोली—'तबीयत ठीक होते ही लोचन भैया तुम्हें वहाँ पहुँचा देंगे.... इन्होंने ही तुम्हें घोड़े पर से बचाया था।...धन्यवाद देना चाहो तो अभी दे डालो झटपट...'

'बहुत-बहुत धन्यवाद आपको....' कहकर मधु ने कृतज्ञ दृष्टि से लोचन की ओर देखा—'आपका यह अहसान कभी नहीं भूलूँगी मैं...'

'अहसान भूलो तो भूलो मगर लोचन भैया को याद करती रहना कभी-कभी...' कहकर अचला हँसने लगी।

'तू चुप नहीं रहेगी अचला ?...' लोचन ने डाँटा।

'लो चुप हुई जाती हूँ भैया। मेरा बोलना तुम्हें कभी अच्छा भी लगा है ? जैसे मेरे मुँह से मीठी आवाज ही नहीं निकलती...'

'मगर आप लोगों को मेरा नाम कैसे मालूम हुआ ?'—पूछा मधु ने।

'तुम्हें नहीं मालूम—' अचला फिर बोली—'अभी-अभी नवल ठाकुर यहाँ आये थे। केवल शर्बत पीकर चले गये...'

'मुझसे नहीं मिले ?....'

'भैया ने उन्हें तुम्हारा पता ही नहीं बताया...'

'देख माँ ! यह अचला झूठ बोलती जा रही है, शैतान कहीं की...' बोला लोचन, फिर मधु से नम्र स्वर में कहा उसने—'बात यह है कि सहिजनवाँ से हमारा मनमुटाव है...मैं नवल ठाकुर को रोकना चाहता था, परन्तु उन्होंने मेरी एक न सुनी और मेरा अपमान करके चले गये...'

'मुझे जाने दीजिये, वे परेशान होते होंगे...'

'तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है...कल तुमको पहुँचा दूँगा...अभी तुम आराम करो...नवल ठाकुर को विश्वास हो गया है कि तुम मेरे यहाँ हो तभी तो वे जाते समय धमकी दे गये हैं...'

फिर मधु चुप हो रही।

वह अपने प्राण रक्षक से अधिक हठ नहीं करना चाहती थी। लोचन उसे बहुत सभ्य और सज्जन प्रतीत हुआ।

'भैया ! इस मधु को कभी न जाने दो तो कैसा रहे ?...' अचला ने गम्भीर भाव से प्रश्न किया।

'इन्हें एक दिन रोकने से तो नवल ठाकुर इतना बिगड़ गये, जिन्दगी भर रोक सकूँ ऐसे भाग्य कहाँ ?...' लोचन के स्वर में करुण गाम्भीर्य था।

मधु का हृदय डोल गया। बोली—'ऐसा न कहिये आप !....मैं अकृतज्ञ नहीं, जब तक आप कहें मैं रुक सकती हूँ...'

ठकुराइन चली गई थीं। अचला भी चली गई। बोला लोचन—'ऐसी बात नहीं मधु ! ठाकुर लोग दूसरे के मुख का कौर नहीं छीनते...नवल से तुमको जबरदस्ती दूर रखने की मेरी आकांक्षा नहीं....कभी तुम्हें अपने इस गरीब प्राण-रक्षक का मोह जगे तो हमारा द्वार तुम्हारे लिए हमेशा खुला मिलेगा...'

मधु समझ कर भी नहीं समझी लोचन का मतलब !

कहने लगी, बात का रुख पलट कर—'आप दोनों में पुश्तैनी दुश्मनी को लेकर जो तनातनी चली आ रही है, उसे दूर कर दिया जाय तो कैसा रहे....'

'तुमने मेरे मन की बात कह दी मधु !...मैं एक छोटा-सा जागीरदार... सहिजनवाँ से बैर बाँधने का मेरा मुँह नहीं...मैं चाहता था, नवल को समझाऊँ ...मगर नवल ने तो ठीक से आँखें भी न मिलाई, दिल मिलाना तो दूर रहा—तुम्हारे बच जाने की उसने कहानी भी नहीं सुनी, मुझे शाबासी भी नहीं दी....अचला ने शर्बत ला दिया तो अपने जूते को पिलाकर चला गया वह...'

'जूते को ?...'

'हाँ मधु !...' लोचन के स्वर में करुणा थी—'मेरी गिलास को उसने अपने होठों से लगाने में अपमान समझा। मैंने उसका शरीर अपने कलेजे से बाँध लिया, मगर निष्ठुर ने वहाँ की एक भी धड़कन नहीं सुनी... वह तो मेरा खून पीना चाहता था, मैं उसके लिए भी तैयार था, मगर...'

'लोचन ठाकुर ! नवल ने तुम्हें पहचाना नहीं...पहचान लेने पर तुम्हें कोई छोड़ नहीं सकता...'

'तुमने मुझे पहचान लिया, इसका शुक्रिया...मगर तुम भी तो मुझे छोड़कर चली जाओगी एक दिन ?' बोला लोचन।

'मधु तुमसे दूर रह सकती है, मगर तुम मधु को हमेशा अपने पास पाओगे लोचन ठाकुर ! तुमने मेरी रक्षा की है। मेरे प्राण का कण-कण तुम्हारा ऋणी है...'

'इस ऋण से तुम जल्द उऋण हो सको, यही इच्छा है मेरी....' बोला लोचन—'गरीब आदमी का ऋण अधिक दिन तक मत रोक रखना मधु !'

रात में—बजगवाँ की कोठी में ग्रामीण बालाओं का जमघट लगा, अचला के नेतृत्व में। मधु को देखकर सभी चकित, सभी प्रसन्न।

'यह कौन हैं अचला दीदी ?...' एक ने पूछा।

'मेहमान हैं भाई ! मेहमान !...' अचला ने कहा—'लोचन भैया से मिलने के लिए शहर से घोड़े पर चढ़कर आई हैं....'

'भैया रे भैया, घोड़ा पर चढ़कर ?...' दूसरी ने आश्चर्य प्रकट किया।

'अरे बहिनी रे, हम पचे घोड़ा चढ़ीं तऽ लागई आसमान में उड़ी जात हईं....' तीसरी बोली।

आधी रात तक खूब होहल्ला होता रहा।

जमघट खतम होने पर अचला ने मधु को सुला दिया और स्वयं अपने कमरे की ओर बढ़ी। रास्ते में ठकुराइन के कमरे में उसने लोचन की आवाज सुनी, वह रुक गई।

लोचन कह रहा था—'माँ ! अचला बड़ी हो गई...सहिजनवाँ से मित्रता भी करनी है...मित्रता न होकर एक अटूट सम्बन्ध ही हो हो जाय तो कैसा रहे ?...अचला और नवल अच्छे तो पड़ेंगे...'

अचला का हृदय धड़कने लगा।

वह रुकी नहीं, अपने कमरे में आकर पलङ्ग पर पड़ रही। तकिया सर के नीचे से खींचकर हृदय से दबा लिया उसने।

नवल ! कितना गम्भीर, कितना तेज, कितना सुन्दर !

और अचला। अचला तो शर्बत के गिलास में अपने दिल की सारी तमन्नायें ही घोलकर उसके सामने रख दी थी।

निर्दयी ने स्वीकार नहीं किया तो क्या ?

अचला उसे ठीक कर लेगी।

जाने क्या-क्या सोचती हुई अचला सो गई। दूसरे दिन—

अचला कहीं गई थी। लोचन अपने कार्य में तल्लीन था।

अकेली बैठी मधु ने सोचा, घूम-फिरकर गाँव ही देख ले वह।

निकल पड़ी मधु। छोटा-गाँव, जो भी उसे देखता, सहम कर देखता ही रह जाता। सहिजनवाँ में गाँव की असलियत बहुत कम थी, बजगवाँ तो असली गाँव था।

थोड़ी ही देर में सारा गांव घूम आई मधु।

गांव से कुछ ही कदम पर मधु ने एक झोपड़ी देखी।

झोपड़ी से थोड़ी दूर पर, नीम के पेड़ के नीचे, फटे-पुराने चीथड़े पहने एक युवक बैठा था। चार-पांच लड़के उसे चिढ़ा रहे थे।

मधु को आते देखकर लड़के चुप हो गये। युवक दूसरी ओर देखता बैठा रहा। मधु पास आ गई। लड़के कुछ और दूर हट गये। युवक ने पाँवों की आहट सुनकर मधु की ओर देखा।

'तुम्हें ये लड़के क्यों चिढ़ा रहे हैं ?'—मधु ने पूछा।

'इनका तो यह काम ही है हजूर !'—बोला युवक—'ये न हों तो मेरे दिन ही न बीत पायें...दिल बहल जाता है सरकार इनकी चुहलबाजी से....'

'तुम्हें कोई काम-धाम नहीं रहता क्या ?...'

'रहता है सरकार !...कभी दिल आया तो थोड़ा-बहुत काम कर भी लेता हूं, नहीं तो यहीं बैठा-बैठा इन बच्चों को बहलाया करता हूं...'

'तुम बहुत गरीब हो....' मधु ने अपनी जेब टटोलते हुए कहा।

'अमीरी अपने भाग्य में थी नहीं हजूर !...और इस गरीबी को दूर कर सकना मेरी हिम्मत के बाहर है...क्या करूं, यों ही दिन बीत जाते हैं। दुनिया में सभी तो अमीर नहीं होते...'

'लो...इसे ले लो....' मधु ने युवक के सामने एक रुपया निकाल फेंका। रुपया युवक के सामने जमीन पर गिरा।

'क्या है हजूर ?....' कहकर युवक हाथों से जमीन टटोलने लगा।

मधु चौंक पड़ी। उसने ध्यान से युवक को देखा—गरीबी से सना हुआ वह युवक सुन्दर था, अवस्था बहुत कम, आंखें खुली, मगर...युवक जमीन टटोल रहा था। रुपया उसे अब तक नहीं मिल सका था।

'यह क्या है !...तुम...तुम्हें दिखाई नहीं देता क्या...' मधु ने आश्चर्य के साथ पूछा।

'नहीं हजूर !...दिखाई ही देता, तो यों दुनिया से अलग कैसे हो रहता ?....' युवक के स्वर में बेहद दर्द था।

'कुछ भी नहीं देख सकते तुम ?...'

'बहुत-कुछ देख लेता हूं सरकार ! मगर आंखों से नहीं दिल से....आपकी आवाज से ही मैंने आपका रुतबा देख लिया...आप शायद कोठी पर आई हैं....'

'हां...'

'बड़ी दया की सरकार आपने इधर आकर !....' युवक अब तक रुपया न पा सका जा। जमीन टटोल रहा था बेचारा।

एक लड़के ने रुपया उठाकर उसके हाथ पर रख दिया।

'आप बड़ी उदार हैं सरकार !....यह अन्धा आपको देख नहीं सकता, देखना चाहकर भी....तो अपना पैर ही इधर कीजिये...छूकर मस्तक से लगा लूं...'

'रहने दो, इसकी आवश्यकता नहीं....मुझे तुम पर बड़ी दया आती है....' बोली मधु !

'दया आती हो सरकार, तो अपना पैर छूने दीजिये मुझे.... अन्धे की यह जरा-सी साध बाकी मत छोड़िये हजूर ?...'

'अच्छा लो....' मधु ने अपना दाहिना पैर आगे कर दिया।

अन्धे युवक ने टटोल कर मधु का पैर पकड़ लिया। कुछ देर तक वह उस सुकुमार पैर को पकड़े रहा, फिर बोला—

'धन्य भाग मेरे !....ऐसे सुकोमल पैर का स्पर्श पाकर मेरे हाथ कृतकृत्य हो गये....क्या मनोहारी मूर्ति गढ़ी है विधाता ने आपकी... सब कुछ ठीक है सरकार ! अनुमान है....केवल चांद के कलंक की तरह एक जरा-सा धब्बा...'

'मेरे शरीर पर ?...'

'हाँ हजूर !....बायीं पसली के जरा-सा नीचे....' बोला युवक।

'ओह, हाँ ! लड़कपन में वहाँ फोड़ा हो गया था—भीषण नश्तर लगाने पर ही अच्छा हुआ...' कहते-कहते मधु चौंक पड़ी—'युवक ! तुम यह कैसे जान पाये ?'

'मैं जान गया हजूर....मैं जान सकता हूँ....पता नहीं कौन-सी शक्ति है, जो....'

तभी मधु को नवल की बात याद आ गई, जो उसने उस अद्‌भुत मूर्तिकार के बारे में कही थी। पूछा उसने—'तुम कौन हो ?...अन्धे युवक ! .. तुम हो कौन ?....'

'एक गरीब संगतराश हजूर !....'

'क्या काम करते हो तुम ?....'

'पत्थर के खिलौने बनाया करता हूँ सरकार !...'

'खिलौने या मूर्तियाँ ?...' मधु आश्चर्य में भरी खड़ी थी।

'जो भी समझ लें आप !...देख नहीं सकता कुछ, टटोलकर जो कुछ बना लेता हूँ, उसी से यह पापी पेट चलता है....'

'तुम्हारा नाम ?...' मधु ने उतावली के साथ पूछा।

'पारस....' युवक बोला।

'पारस !...' मधु आश्चर्य में भरकर बोली—'पारस है तुम्हारा नाम ?'

'हाँ हजूर !....' बोला युवक—'पारस ही कहते हैं मुझे...एक पारस वह होता है, जो लोहे को सोना बनाता है और एक पारस मैं हूँ जो खुद लोहा होते हुए भी सोना नहीं बन पाता...मजबूरी है सरकार !...'

'मैं तुम्हें ही खोज रही थी पारस ! तुम्हारी कला ने मुझे बहुत दिनों से पागल कर रखा था....तुम कितने महान कलाकार हो, केवल मेरा दिल ही जानता है...

यहाँ रहते-रहते तुम अपनी महत्ता नहीं जान सके हो पारस !...' मधु ने कहा—'मैं तुम्हें अपने साथ ले चलूँगी, तुम्हें सहारा दूँगी, तुम्हें आसमान पर बिठाकर चाँद-सा चमकाऊँगी। दुनिया देखेगी कि आँखें न रहते हुए भी एक सच्चा कलाकार कितनी दूर तक देख सकता है। लोग तुम्हारी कला की पूजा करेंगे कलाकार !'

'भगवान की पूजा करते-करते लोग थक गये हों तो मुझ जैसे इन्सान की पूजा से उन्हें बरदान नहीं मिल पायेगा सरकार ! फिर भी मैं चलूँगा आपके साथ। आपकी आँखों में इस अन्धे ने जगह पाई है, तो मैं उस जगह का अनादर नहीं करूँगा। इन्सान अहसान से खरीदा जा सकता है, दौलत से नहीं ! अबतक कितने ही लोग दौलत की लालच देने आये, मगर अन्धी आँखें धन की चमक पर न रीझ सकीं। किसी हमदर्द का दिल खोज रहा था, सो मुझे मिल गया... आप मुझे ले कहाँ चलेंगी सरकार ?...'

'सहिजनवाँ ले चलूँगी तुम्हें और फिर वहाँ से शहर—गाँव तुम्हें इज्जत नहीं दे सका, शहर के लोग इज्जत और धन से तुम्हें...'

'इज्जत और धन की मुझे चाह नहीं हजूर !...चाह है तो केवल दिल को इस बात की कि लोग अन्धों की कीमत समझें...मगर सरकार सहिजवाँ जाने के लिए शायद अपने ठाकुर साहब इजाजत न दें...' बोला पारस।

'मैं सब ठीक कर लूँगी...ठाकुर राजीवलोचन सिंह को कोई एतराज न होगा।'

'मैं सब तरह से तैयार हूँ सरकार !...आँखें होतीं तो गाँव छोड़ते कुछ मोह भी लगता....माला कहती है कि अन्धों को ममता नहीं होती। नादान को कैसे समझाऊँ कि दुनिया के लिए चाहे कितना भी कठोर हूँ, उसके लिए तो पत्थरों से खेलनेवाला यह गरीब कारीगर भी पानी-पानी बनकर बह गया है...'

'यह माला कौन है ?'—पूछा मधु ने।

तभी—'भैया !....पारस भैया ! तुम्हारी मूरत मैं उस साहूकार के हाथ बेंच आई। बड़ी मुश्किल से हरामी ने चार आने दिया... कहता था, तुम रोज आया करो माला !...जैसे माला उसके बाप की भतीजी ही तो है....'

मधु ने देखा, कहते-कहते वह लड़की रुक गई। चौदह साल से जलती आती हुई शमा मधु को देखकर शरमा उठी। छुई-मुई-सी वह पारस की बगल में खड़ी रह गई।

'यह कौन है कलाकार ?'—मधु ने पूछा।

'कलाकार की यह कारीगरी है सरकार !...मेरी बहन माला !...अन्धी आँखों का प्रकाश है यह हजूर ! यह न रहे तो पारस कुछ कर नहीं पाता, मेरे दिल की आँखें बेकार हो जाती हैं इसके बिना ! दुनिया में यही मेरा सब कुछ है। इसी के मोह ने मुझे अब तक इस मायाजाल में बाँध रखा है। संसार से दूर होना चाहकर भी दूर नहीं हो पाता। आराम पाने का लोभ लेकर भी आराम नहीं कर सकता। खुद भूखा रह सकता हूँ, मगर इस नादान के लिए तो दो-चार आने चाहिए ही....सुना है शहर में आँख और ताकत रखने वाले भिखमंगे भी दो-चार रुपये पा लेते हैं, मगर गाँव में तो लोग अन्धे-अपाहिज की कारीगरी के बदले भी दो-चार आने नहीं दे सकते !'

पारस चुप हो गया। मधु ने माला की ओर देखा।

उस अद्भुत कलाकार की प्रेरणा भी विचित्र थी। भरे तालाब में खिले हुए कमल-सी देह, नीले आसमान पर चमकते हुए चाँद सा चेहरा, ओस से नहाई हुई गुलाब की कली-सी आँखें, आकाश पर तैरती हुई हल्की-भूरी बदली-से मुख पर धूल का आवरण।

वह मधु को देख रही थी, हैरत भरी आँखों से। अपने अन्धे भैया के पास आज वह पहले-पहल अपने सिवा एक दूसरी नारी को देख रही

थी, शायद उसके भैया का प्यार बँटाने आई थी।

'यह कौन हैं भैया ?' माला ने पूछा पारस से।

'इन्हें सलाम कर माला !....कोठी पर ठाकुर के यहाँ आई हैं। बड़ी दयावान है। हमारे दिन फेर देंगी...'

'हमें किसी की दया नहीं चाहिए भैया ?'—बोली माला—'जिसे भगवान नहीं देगा, उसे कोठी वाले क्या दे सकेंगे ?...'

'चुप रे चुप...' पारस ने कहा—'ज्यादा जबान चलाना ठीक नहीं...ये हमारे लिए भगवान बनकर आई हैं। भगवान ने ही इन्हें भेजा है....'

'किसलिए भला ?...'

'हमें बुलाने के लिए...चलेगी तू...'

'हाँ...मगर भगवान ने तो इन्हें नहीं भेजा होगा भैया ! ये भी तो हमारी तरह हैं...हम यहीं अच्छे हैं, हम कहीं नहीं जायेंगे भैया !...'

'मैं तो जरूर जाऊँगा....'

'मुझे छोड़ दोगे यहीं ?' माला की आँखों के कोनों पर एकाएक मोती उग आये। मुख कातर होकर गम्भीर हो चला।

'हाँ...तू यहीं रहना....' बोला पारस।

'तो मैं भी चलूँगी...' बोली माला—'तुम मुझे छोड़ दो, मैं तो तुम्हारा साथ दूँगी ही...इस माला का बोझ अपने गले से इतनी जल्दी नहीं उतार सकोगे तुम....दूसरों की चाह के पीछे माला को भले ही भूल जाओ तुम, मगर माला के लिए तो एक तुम्हीं हो भैया ! कैसे छोड़ दूँ तुम्हें ?'

रोती हुई माला दूसरी ओर चली गई।

बोला पारस—'नादान है सरकार ! कुछ ख्याल नहीं करेगी। मैं उसे मना लूँगा। वह कुछ दूसरा समझ बैठी है।'

'तो तुम लोग तैयार रहना...कल या परसों चलेंगे हम लोग....' कहकर मधु कोठी की ओर चली गई।

● ●

बैठक में ठाकुर रामकिशोर सिंह बैठे हैं। सात आठ मुसाहब भी उपस्थित हैं। सभी के चेहरे पर शाम की उदासी छाई है। ठाकुर का मुख अतिशय गम्भीर है। सर पर हाथ रखकर वे कुछ सोच रहे हैं। मुन्शीजी भयभीत मुद्रा में सामने खड़े हैं।

शाम हो गई है। शमा जल रही है, परन्तु चिन्ता की छाया ने सबके मुख पर अन्धकार की स्याही पोत दी है।

तभी एक लठैत ने आकर जुहार की—'छोटे राजा आये हैं...'

'भेजो....' ठाकुर ने आज्ञा दी।

थोड़ी ही देर बाद सर लटकाये हुए नवल ने प्रवेश किया। आकर बड़े राजा के सामने चुपचाप खड़ा हो गया वह।

'छोटे राजा!....'

'......' नवल चुप।

'मुँह खोलो छोटे ठाकुर! जवाब दो।' बड़े राजा का स्वर कठोर था—'मेरी बेटी मधु कहाँ है!....घुमा लाये उसे तुम?...'

'बाबा...' नवल ने मुँह खोला।

'बाबा मत कहो...' गरजे ठाकुर—'यह न भूलो कि तुम दरबार में खड़े हो....मधु कहाँ है?...'

'मैं अभी बजगवाँ से आ रहा हूँ बड़े राजा, मधु वहीं है...'

'क्या कहा?....मधु ठाकुर राजीवलोचन के यहाँ है...क्यों? कैसे?...'

'वह उसे अपने यहाँ उठा ले गया'—नवल ने कहा।

'उस नाचीज की इतनी हिम्मत कि सहिजनवाँ की इज्जत पर डाका डाले...मसल दूँगा चुटकी से, मच्छर जैसा मिट जायगा हरामखोर!...नरायन! खड़ा मुँह क्या देख रहा है? सब लठैतों

को तैयार होने का हुक्म दे....सबेरे बजगवाँ पर धावा बोल दे.... कोठी की एक-एक ईंट उखाड़ फेंकना ! नवल तुम भी साथ जाओगे...'

'जो आज्ञा बड़े राजा !....'

'कल का छोकरा सहिजनवाँ से बैर बाँधना चाहता है ?.... उसका बाप तो भीगी बिल्ली बनकर दूर-दूर ही रहता था, कभी शेर बनकर सामने नहीं आया...यह लोचन अपने को समझता क्या है ? मरने के पहले चींटी को पर आ रहे हैं, बुझने के पहले दिया भभक रहा है...मैं समझ लूंगा उस लुच्चे को....'

बड़े राजा हाँफने लगे थे। थोड़ी देर चुप रहे वे।

'छोटे राजा ! तुमने वहाँ मधु को अपनी आँखों से देखा ?'

'नहीं....परन्तु यह निश्चित है कि मधु वहीं है। मैंने अच्छी तरह पता लगा लिया है'—कहा नवल ने।

'ठीक है...' बड़े राजा बोले—'कल सबेरे चढ़ाई कर दो, सौ लठैतों को लेकर। पुश्तैनी दुश्मनी एक बार फिर हरी हो जाय। उसकी नींव हिल रही थी, अब और मजबूत हो जाय तो ठीक... अब तुम लोग जा सकते हो ! मैं एकान्त चाहता हूं...'

आज्ञा पाते ही सब बैठक से बाहर हो गये। बड़े राजा गाँव-तकिये के सहारे बैठ मस्तक पर हाथ रखकर कुछ सोचने लगे।

● ●

लोचन बैठक में बैठा हुआ अपना हिसाब-किताब देख रहा था। दिन चढ़ आया था। धूप में तेजी आ गई थी। लोचन के पीछे खड़ा हुआ एक भृत्य पंखा झल रहा था। घनश्याम पास ही चुपचाप बैठा था। तभी कोठी के अन्दर जोरों का शोर-गुल होने लगा। लोचन ने

चौंककर सर उठाया। घनश्याम उठ खड़ा हुआ। ऐसा शोर-गुल एकदम नया था।

लोचन और घनश्याम की नजरें मिलीं।

लोचन बोला—'देखो तो घनश्याम बात क्या है ?'

परन्तु घनश्याम के जाने के पहले ही घबड़ाया-काँपता हुआ एक लठैत अन्दर आकर लोचन के सामने गिर पड़ा। उसका सर फट गया था। बहते हुए रक्त की धार से फर्श लाल होने लगी। लोचन उठ खड़ा हुआ। लठैत के पास आकर बोला—'क्या हुआ दीनू ?'

'सहिजनवाँ के लठैत सरकार !...सैकड़ों...छोटे राजा भी हैं... मार-काट करके कोठी का फाटक तोड़ अन्दर घुस आये हैं। चारों ओर से घेर लिया है। अपने को बचाओ सरकार....हमने रोकने की कोशिश की, मगर मुट्ठी भर आदमी क्या करते...'

'हूँ !...' लोचन की आँखें लाल हो आईं। अङ्ग फड़ककर रह गये।

'सरकार !...' घनश्याम कुछ बोल न सका।

'घनश्याम ! तुम मेरी बन्दूक लाओ...' कहता हुआ लोचन तेजी से बाहर निकला।

आँगन में ठकुराइन और अचला घबड़ाई हुई मिल गईं।

'मधु कहाँ है अचला ?...'

'अभी तक नहीं आई भैया ! माँ से कहकर गाँव घूमने गई थी...'

'हूँ !....तुम दोनों मेरे कमरे में अन्दर से दरवाजा बन्द करके बैठी रहो....मैं उधर देखता हूँ...'

'अब क्या होगा बेटा ?....' ठकुराइन का स्वर काँप रहा था।

'तुम घबराओ नहीं माँ !...मैं देख लूंगा....'

लोचन दौड़कर अपने कमरे में आया। घनश्याम बन्दूक ठीक कर चुका था। बाहर का हो-हल्ला और तीव्र हो गया था। बजगवाँ के

निवासी काँपते हुए अपने घरों में बन्द पड़े थे। सहिजनवाँ के लठैतों ने कोठी का फाटक तोड़ डाला था और अब सदर दरवाजा तोड़कर कोठी में घुसने की तैयारी कर रहे थे। सदर दरवाजे पर धमाधम चोटें पड़ रही थीं।

तभी सदर दरवाजा अपने आप खुलने लगा। पूरा खुल गया तो हाथ में बन्दूक लिए लोचन और घनश्याम दिखाई पड़े।

लोचन का लम्बा-चौड़ा शरीर और चेहरे का रौद्र रूप देखकर लठैत सन्नाटे में आ गये। किसी से वार करते न बन पड़ा। नवल पीछे खड़ा था। बढ़कर लोचन के सामने आया। दोनों ठाकुरों की प्रज्ज्वलित आँखें आग उगलती हुईं एक दूसरे में समा गईं।

'क्या इरादा है छोटे ठाकुर?'—लोचन ने पूछा।

'इस कोठी की एक-एक ईंट उखाड़ कर फेंक देने आया हूँ'—नवल तीव्र स्वर में बोला।

'यह सहिजनवाँ की नई हवेली नहीं नवल ठाकुर, बजगवाँ की प्राचीन कोठी है...सदर दरवाजा मैंने अपने आप खोल दिया है, वरना कोशिश करते-करते बूढ़े हो जाते तुम और यह दरवाजा जरा भी न हिलता...हम दो ही आदमी ऊपर से इतने आदमियों को भून डालते और तुम्हें पता भी न चलता कि गोली किधर से आ रही है....'

'लोचन ठाकुर! ज्यादा डींग अच्छी नहीं होती...'

'डींग मारना तो तुम जैसे कायरों का काम होगा, ठाकुरों का नहीं...' लोचन तेज आवाज में बोला।

'बड़े भारी ठाकुर बनते हो तभी घूँघट निकालकर अब तक घर में छिपे बैठे थे'—नवल का स्वर उत्तेजित था।

'अपने घर में बैठना जुर्म नहीं छोटे ठाकुर! दूसरों के घर पर तुम्हारी तरह डाका डालना ही अपराध है। खून का शर्बत पीना चाहते थे न उस दिन?...आओ, ताकत हो तो लोचन के सीने में अपनी तलवार भोंककर प्यास बुझाओ...झगड़ा हमारा-

तुम्हारा है। उसमें इतने लठैतों का क्या काम ?....हौसला हो तो आगे बढ़ो। हम लोग आपस में निपट लें और ये लठैत चुपचाप खड़े तमाशा देखें...अगर ताकत न हो तुममें तो लठैतों के बल पर लूट लो कोठी... हमारे पास भी इतने लठैत होते तब मजा आता....'

'ठीक है...' बोला नवल—'हम दोनों ही निपटारा कर लें। हमारे लठैत कुछ नहीं बोलेंगे...मगर शर्त यह है कि इसमें जो हारेगा, वह बन्दी बना लिया जायगा और उसका न्याय विजेता के हाथों होगा ?...'

'मुझे मंजूर है...' लोचन बोला—'कौन-सा हथियार पसन्द करोगे ?...तलवार ठीक होगी ?...'

'तलवार ही सही....' नवल ने कहा।

'घनश्याम....मेरी तलवार लाओ...हाँ, एक छोटे राजा के लिए भी...और माँ तथा अचला से कह दो कि अब डरने की कोई बात नहीं...बाहर आकर तमाशा देखें।'

घनश्याम भीतर चला गया। लोचन ने अपने मस्तक का पसीना पोंछा। नवल ने लठैतों को विश्राम करने की आज्ञा दे दी।

घनश्याम दो तलवारें लिए लौटा !

एक लोचन ने ले ली और दूसरी नवल ने !

'नवल ठाकुर !...' लोचन बोला—'सभ्यता से पेश आना चाहो तो अब भी लोचन का सर तुम्हारे आगे झुकने को तैयार है...'

'हाथ में तलवार रहते जबान से वार करने की कोई जरूरत नहीं लोचन ठाकुर !...उठाओ हाथ...'

'आ जाओ फिर...अरे पहले गले नहीं मिलोगे छोटे राजा ? क्रोध में आकर ठाकुरों की पुरानी रीति भी बिसार बैठे हो।'

दोनों शत्रु गले मिले, फिर पैतरा बदल कर आ खड़े हुए।

लठैत दूर हटकर खड़े हो गये। घनश्याम ने अपने हाथ की बन्दूक कोने में रख दी। दरवाजे की ओट में ठकुराइन और अचला

आ खड़ी हुई। ठकुराइन का मुख गम्भीर था।

झन्न!....झन्न-झन्न-झन्न! यह तलवारों की झनझनाहट थी, यह दिन के उजाले में दो बिजलियों की गड़गड़ाहट थी।

तलवारें चल रही थीं, बहादुर पैतरे बदल कर वार बचा रहे थे। दर्शकों की आँखें तलवारों की चमक पर टिक नहीं पा रही थीं।

'लोचन ठाकुर! आज पुश्तैनी दुश्मनी नया रङ्ग पहन रही है...' लड़ते-लड़ते बोला नवल।

'आज इसकी जड़ टूट जायगी नवल!...लोचन के किसी पूर्वज का अपमान हुआ था। आज लोचन की तलवार तुम्हारे रक्त से उस मृत महापुरुष का तर्पण करेगी...लो बचाओ वार!...'

कहकर लोचन ने प्रबल वेग से तलवार का वार किया।

नवल तलवार की लड़ाई में कम पटु नहीं था। अजीब फुर्ती से उसने लोचन का वार बचा लिया, फिर चिल्लाकर बोला—'अब तुम बचो...'

लोचन की तलवार नवल की तलवार से जा टकराई। वार तो बचा लिया गया, परन्तु लोचन की तलवार की जङ्ग लगी मूठ उखड़ गई। तलवार दूसरे वार के लिए लपकी, लोचन की ओर।

अचला के मुख से चीख निकल पड़ी। घनश्याम ने घबड़ाकर अपनी आँखें बन्द कर ली। ठकुराइन पूर्ववत् गम्भीर बनी खड़ी रहीं।

मगर लोचन चैतन्य था। वह तेजी से एक ओर को हट गया।

नवल की तलवार का वार उस पर न होकर जमीन पर हुआ।

लोचन ने तेजी से उठकर नवल की कमर जा पकड़ी। दूसरे ही चण नवल जमीन पर था और उसकी तलवार लोचन के हाथ में।

अचला ने लम्बी साँस खींची। घनश्याम ने आँखें खोल दी। ठकुराइन का शरीर जरा-सा हिलकर फिर पूर्ववत् हो गया।

'घनश्याम! छोटे ठाकुर के लिए दूसरी तलवार लाओ...' लोचन ने हँसकर कहा।

नवल गर्द झाड़ता हुआ उठा। तब तक घनश्याम ने दूसरी तलवार लाकर उसे दे दी। फिर तलवारों की झनझनाहट शुरू हुई।

● ●

पारस से मिलकर मधु बहुत प्रसन्न थी। उस गरीब अन्धे की कला उसके हृदय में घर कर गई थी। आज यदि ऐसा अगम कलाकार शहर में होता तो उसकी सारी गरीबी दूर भाग गई होती। मगर गाँव वालों के लिए उसकी कला का मूल्य ही क्या था? सोचती हुई मधु कोठी की ओर बढ़ी जा रही थी? कोठी के पास पहुँच कर मधु ने देखा, आदमियों की काफी भीड़ एकत्र है?

झन्न!...झन्न! मधु के कान खड़े हो गये? उसने तेजी से पैर बढ़ाये। कलेजा धड़कने लगा था उसका। पास पहुँच कर उसने देखा, उसके रक्षक और पोषक आपस में युद्ध कर रहे हैं। उसके मुख से आर्तनाद निकलते-निकलते बचा। उफ्, भगवान यह क्या हो रहा है?

'नवल ठाकुर!...' मधु चिल्लाई—'नवल?...रोक लो अपनी तलवार?...नवल ठाकुर? रुको...रुक जाओ...'

परन्तु नवल की तलवार नहीं रुकी।

'ईश्वर के लिए तुम्हीं रुक जाओ लोचन ठाकुर! अनर्थ न करो...हाथ रोक लो लोचन!....'

मगर जोश के अन्धे ठाकुरों के कान तो एकदम बहरे हो चुके थे। सुनता कौन? मधु दौड़कर ठकुराइन के पास आई।

बोली—'माँ इन दोनों को रोक लो। अनर्थ हो जायगा। दो वंशों के चिराग बुझ जायँगे...'

'होने दो, जो कुछ हो रहा है—' ठकुराइन गम्भीर स्वर में बोलीं। उनकी आँखें युद्धस्थल की ओर लगी थीं।

'ठाकुर राजिवलोचन की जय !...' तभी घनश्याम चिल्ला पड़ा। साथ ही मधु और अचला के मुख से चीख निकली।

लोचन की तलवार नवल के दाहिने कन्धे में घुस गई थी।

लोचन ने आगे बढ़कर नवल को उठाया और उसे अपने कन्धे का सहारा देकर बोला—'मुझे दुख है छोटे राजा कि जीत तुम्हारी नहीं हो सकी...'

'यह तो होता ही रहता है लोचन ठाकुर !....' पीड़ा से कराहता हुआ बोला नवल।

'तुम हमारे बन्दी हो नवल ठाकुर !...अपने लठैतों को वापस जाने की आज्ञा दो—'

नवल ने लठैतों को लौट जाने की आज्ञा दी। लठैत छोटे मुँह पर बड़ा-सा धब्बा लिए लौट चले। तब तक ठकुराइन आ गयीं। लोचन की बलैया ली उन्होंने फिर नवल के मस्तक पर प्यार से हाथ फेरा। नवल लोचन के कन्धों के सहारे खड़ा था। घाव से रक्त की धार बह रही थी।

'इसे अन्दर ले चलो बेटा !'—ठकुराइन ने कहा—'घनश्याम तू दौड़कर अलगू शास्त्री को बुला ला...अचला, ओ अचला ! जाकर लोचन की पलंग पर बिस्तर लगा दे...ओ मधु। यहाँ आकर नवल को सहारा दे बेटी !....'

मधु बेहोश-सी हो रही थी। ठकुराइन का स्वर सुनकर सजग हुई। नवल लोचन के कमरे में लाया गया। बिस्तर पर लिटाते ही उसे गश आ गया। लोचन ने उसके सीने का कपड़ा खोल दिया। कन्धे की बाँह फाड़ दी। मधु पङ्खा झलने लगी।

'अचला ! एक गिलास पानी...' लोचन ने पुकारा।

आज अचला में गजब की फुर्ती आ गई थी। पानी तुरन्त लेकर आ खड़ी हुई वह। लोचन ने पानी में फिटकिरी घोलकर नवल का घाव साफ किया। तभी अलगू शास्त्री पधारे।

शास्त्रीजी ने घाव की मरहम-पट्टी की।

'जान का खतरा तो नहीं है वैद्यजी ?' ठकुराइन ने पूछा।

'अरे नहीं बहू ! इन्हें गश आ गया है, थोड़ा आराम मिलते ही होश आ जायगा...' कहकर अलगू शास्त्री चले गये।

बेहोश नवल को दो घण्टे में होश आया।

क्षीण स्वर में उसने पुकारा—'मधु।...'

अचला उसका सर सहला रही थी। स्वर सुनकर बोली नहीं कुछ। कमरे में और कोई नहीं था। नवल ने अपना बायाँ हाथ मस्तक पर ले जाकर अचला के हाथों पर रख दिया और बोला—'रहने दो मधु ? मस्तक में पीड़ा नहीं है....'

अचला ने अपना हाथ हटाया नहीं। नवल बायें हाथ से उन कोमल हाथों को सहलाने लगा। बोला—'तुम्हें खोकर मैं बेजान हो गया था मधु ! तुम्हें पाकर अब जान में जान आ गई है ! हार-जीत तो लगी ही रहती है। तुम इसका दुख मत करो...'

अचला चुप रही। नवल उसका हाथ सहलाता रहा। अचला बेहोश होती गई।

'बोलो कुछ मधु !...तुम्हारा स्वर सुने जैसे जमाना बीत चुका है...नाखुश हो मुझसे क्या ?...कितना कोमल हाथ है तुम्हारा !....'

अचला का हृदय हाहाकार कर उठा यह देखकर कि नवल के हृदय में मधु ने पहले ही से बसेरा कर लिया है। अपने दुर्भाग्य पर वह सिसक पड़ी। सिसकी का स्वर सुनकर नवल चौंका।

बोला—'कौन है मेरे सिरहाने ?'

'मै हूँ....' भर्राए स्वर में अचला बोली।

'तुम !....अचला !' नवल ने अपना हाथ खींच लिया—'क्षमा करना, मैंने जाना मधु है...'

चुप हो गया नवल। अचला उसका सर सहलाती रही।

तभी लोचन और मधु आ गये।

'लोचन ठाकुर!....' नवल कराहते हुए बोला—'मैं तुम्हारा कैदी हूँ। मेरे साथ कैसा व्यवहार होगा, इसके लिए मैं परेशान हो रहा हूँ....'

'कौन कहता है कि तुम कैदी हो नवल ठाकुर! तुम हमारे मेहमान हो....रह गया फैसला, सो उसका भार बड़े राजा पर रहा....'

उस रात नवल ने केवल दूध पीया। घाव में पीड़ा अधिक थी फिर भी रात में नींद अच्छी आई! सबेरे नवल की नींद खुली तो उसने मधु को अपने पायताने बैठे देखा। कोई उसका सर सहला रहा था। नवल ने सोचा, अचला होगी।

'मधु! मैं तो यहाँ कैदी हूँ... क्या तुम भी यहाँ से नहीं जा सकती?....' नवल ने पूछा।

'तुम्हें छोड़कर कैसे जाऊँ...'

'मैं सोचता हूँ, यदि तुम हवेली जाकर मेरी कुशलता का समाचार बड़े राजा को नहीं देती, तो वे लठैतों से अधूरा समाचार पाकर बौखला उठेंगे और क्रोध में आकर पता नहीं क्या कर डालें...'

'मैं जाऊँगी—मगर तुम अपने को कैदी मत समझो, लोचन ठाकुर ने मेरी प्राण रक्षा की थी, मेरे साथ सज्जनोचित व्यवहार किया था....'

'क्या कहती हो मधु? क्या लोचन तुम्हें जबरदस्ती यहाँ नहीं लाया था?' नवल चौंककर बोला।

'नहीं, उन्होंने ही मुझे बचाया, नहीं तो आज तुम मुझे जीवित न देखते....लोचन ठाकुर जो कुछ हैं जिस दिन जान पाओगे तो सारा बैर-भाव भूलकर उन्हें कलेजे से लगा लोगे....तुमने बहुत अन्याय किया है उनके साथ नवल ठाकुर!'

'उफ्! मैंने बहुत बड़ी गलती की मधु!....लोचन ठाकुर कहाँ हैं,

बुलाओ, मैं उनके पैर पड़ूँगा, उनसे माफी माँगूँगा....'

'लोचन ठाकुर तुम्हारा सर सहला रहे हैं नवल !....' मधु ने कहा—'हम लोग तो सोये भी, परन्तु ये सारी रात तुम्हारे सिरहाने यों ही बैठे रह गये...इन्होंने अपनी जागती पलकों की सेज पर तुम्हें रात भर सुला रखा....'

'लोचन ठाकुर !...' नवल ने अपना हाथ मस्तक पर ले जाकर लोचन का हाथ पकड़ लिया—'तुम मेरा सर दबा रहे हो ?'

'लालसा तो तुम्हारे पैर दबाने की थी नवल ठाकुर परन्तु उधर बैठने से तुम मुझे देख लेते और तुम्हारा हृदय घृणा से भर जाता इसलिए सर ही दबाकर सन्तोष पा रहा हूँ....'

'मैंने तुम्हें इतना ऊँचा नहीं समझा था लोचन ठाकुर !...आज से तुम मित्र हुए। मैं बड़े राजा से सारी दुश्मनी भूल जाने के लिए हठ करूँगा....'

लोचन चुप रहा ! हर्ष की दो बूंदें उसकी आँखों से निकलकर नवल के मस्तक पर लोट पड़ीं। मधु विभोर हो उठी। अचला खुशी से फूल गई। तभी घबराए हुए एक लठैत ने आकर सूचना दी—'हाथ में नंगी तलवार लिए बड़े राजा अभी घोड़े से उतर रहे हैं....'

'बड़े राजा !....' नवल चौंक पड़ा।

सभी के चेहरे भयभीत हो उठे। बूढ़े ठाकुर रामकिशोर सिंह का तलवार उठाना मजाक नहीं था।

लोचन शान्त था। पूछा उसने लठैत से—'अकेले हैं या...'

'साथ में केवल एक लठैत है....'

'मैं उनसे मिलता हूँ....' कहकर लोचन दरवाजे की ओर बढ़ा।

'लोचन !...' नवल चिल्लाया—'तुम उनके पास मत जाओ ! क्रोध का भूत उनके सर से बगैर खून देखे नहीं उतरता....लोचन सुनो...पहले मुझे जाने दो उनके पास लोचन !'

मगर लोचन दरवाजे के बाहर जा चुका था।

लोचन बढ़ा जा रहा था। बड़े राजा हाथ में नङ्गी तलवार लिए तेजी से चले आ रहे थे। चेहरा उनका तमतमाया हुआ था।

लोचन को देखकर बोले—'मैं रात में ही आता लोचन ठाकुर। फिर सोचा, तुम्हें इस दुनिया में एक रात और सो लेने दूँ...जवान नवल को हराकर अब इस बूढ़े को हराओ तब मजा !...मेरी इज्जत यों ही नहीं लूट सकोगे तुम...बूढ़ी रगों से बजगवाँ की एक-एक ईंट बजा दूँगा....'

लोचन आगे बढ़ता गया, बोला नहीं कुछ। जब दोनों में दस कदम का फासला रह गया तो लोचन रुक गया और सर नीचा किए हुए खड़ा रहा। बड़े राजा पास आ गये !

'सर ऊपर करो लोचन ठाकुर ! शत्रु के झुके सर पर ठाकुर की तलवार नहीं गिरती....'

परन्तु लोचन का सर ऊपर नहीं उठा, झुकता गया नीचे और दूसरे ही क्षण उसका मस्तक बूढ़े ठाकुर के पैरों पर लोट रहा था।

'कायर कहीं का...बेटे को बहादुरी से जीता, अब बूढ़े को अपनी कायरता से पराजित करना चाहता है...'

'बड़े राजा ! आप दण्ड देने आये हैं, मुझे दण्ड दें, मेरा-सर काट डालें, मगर पहले मेरी गलती पर गौर करें....आपके पैरों की धूल हूँ मैं, आपसे आँख नहीं मिला सकता....आप मेरी जान ले लें, एक शब्द भी नहीं बोलूँगा....आप मेरे शरीर की एक-एक बोटी अलग कर दें, मगर मेरे लहू का एक कतरा भी सी नहीं करेगा...दुनिया भी देख लेगी कि ठाकुर रामकिशोर सिंह को न्यायी तलवार ने एक बेकस का गला घोंटा...'

बूढ़े ठाकुर के क्रोधित शरीर का कम्पन रुक गया एकाएक।

'अपनी जान पर खेलकर मैंने मधु की रक्षा की, उसे अपनी कोठी में मेहमान बनाकर रखा। नवल का सत्कार करना चाहा तो वे अपने जूते को मेरा शर्बत पिलाकर चले गये, कल मेरे ऊपर हमला हुआ।

बुजुर्गों का रक्त गर्म हो उठा। लड़ाई हुई, जिसे हारना था हारा, जिसमें ताकत थी वह जीता....' लोचन का स्वर गम्भीर था।

ठाकुर का तना सर झुक गया। क्रोधित चेहरा गम्भीर हो उठा।

'मेरी इतनी ताकत नहीं कि आपका सामना कर सकूँ, मेरी इतनी हिम्मत नहीं कि आपकी बुजुर्गी का अपमान करूँ....मेरा दोष हो तो अपने पैर पर पड़े हुए इस मस्तक को चूर-चूर कर दें आप...'

बड़े राजा के काँपते हाथों से चमचमाती तलवार छूटकर नीचे गिर पड़ी।

'मेरी तमन्ना बहुत दिनों से थी कि आपके पैरों पर सर रखकर बैर-भाव की नींव हिला दूँ, आज वह पूरी हुई। मेरी जान की ही आहुति लेकर यदि सहिजनवाँ और बजगवाँ की विरोधाग्नि ठण्डी पड़ जाय तो मेरा जीवन धन्य हो उठे....'

'लोचन!' बड़े राजा ने झुककर उसे उठाया—'तुम वास्तव में बहादुर हो। बहादुरी केवल तलवार की ही नहीं होती, मीठी जबान और सज्जनता की भी होती है...तुम जीत गये बेटे! यह बूढ़ा भी तुम्हारे सामने हार बैठा....'

लोचन ने ठाकुर के काँपते शरीर को सहारा दिया।

'सहिजनवाँ को तुमने परास्त कर दिया बेटे! आज तुम्हारे पूर्वज कितने खुश होंगे...'

मधु, अचला और नवल दूर से ही सब कुछ देख रहे थे। तीनों आकर कमरे में बैठ रहे। थोड़ी देर बाद बड़े राजा और लोचन भी आये। मधु ने ठाकुर के पैर छुए, अचला ने भी।

'यह कौन है लोचन!...' ठाकुर ने पूछा।

'मेरी बहन अचला है बड़े राजा!...' लोचन ने कहा।

'नवल बेटा! तुम क्या हारे, इस समय लोचन ने तो इस बूढ़े को भी हरा दिया...'

'इनकी तलवार और जबान दोनों ही तेज हैं ठाकुर बाबा!'

'ठीक कहते हो तुम !'—बड़े राजा बोले—'कल सब लोग चलने की तैयारी कर रखना। मैं थका हूँ, आज आराम करूँगा....'

'बाबा !'—मधु बोली—'एक अन्धा मूर्तिशिल्पी है...बहुत गरीब, उसको भी अपने साथ ले चलूँ !...'

'लिए चल भाई !...अनाथालय से आई है न, अब तो सारी हवेली ही धीरे-धीरे अनाथालय बन जायगी...' कहकर ठाकुर हँस पड़े।

रात में—बड़े राजा एक अलग कमरे में आराम कर रहे थे। लोचन उनका पैर दबा रहा था।

'अब रहने दो बेटा ! बूढ़े को इतना आराम मत दो कि तुम्हारे सर का बोझ बन जाय....जाकर अब सो रहो तुम !...'

'माँ की एक प्रार्थना पेश करना चाहता था बड़े राजा !'

'कहो...'

'डर लगता है, छोटे मुँह बड़ी बात कहते....'

'मेरा बेटा होकर भी तू डरता है ?...बोल, क्या कहा है तेरी माँ ने....'

'कहा है कि...कहा है, दुश्मनी अगर रिश्तेदारी में बदल जाय तो...' डरते-डरते बोला लोचन।

'तुम्हारा मतलब ?'

ठाकुर के प्रश्न से सहम गया लोचन। साहस कर बोला—'मुझे अपना बेटा बनाया है बड़े राजा तो अचला को भी अपनी कोख में शरण दे दो...बेचारी कहाँ जायगी...'

'ओह !...' ठाकुर हँस पड़े—'नवल पर आँख है तुम्हारी ! ठीक है, मुझे तो कोई इनकार नहीं, फिर भी ठकुराइन बहू से तो राय लेनी ही पड़ेगी...'

'हमने प्रार्थना रख दी आपके सामने, अब आप निर्णय चाहे जब दें...' कहकर लोचन सोने चला गया।

दूसरे दिन ! बड़े राजा, नवल, मधु पारस तथा पारस की बहन माला सभी लोग सहिजनवाँ को रवाना हो गये ।

● ●

आज सहिजनवाँ की हवेली में काफी रौनक है। सभी खुश नजर आ रहे हैं। इतनी बड़ी दुश्मनी के टूट जाने की खुशी में बड़े राजा ने पूर्णमासी को ही दीवाली मनाने की आज्ञा दे दी है। चाँदनी रात में हजारों दीपक हवेली पर टिमटिमा रहे हैं।

बैठक भी आज खूब सजा है। ठाकुर रामकिशोर सिंह, नवल, मुन्शीजी, पुरोहित तथा गाँव के प्रतिष्ठित ग्रामीण उचित आसन पर आसीन हैं। नवल के जख्मी कन्धे पर अब तक पट्टी बँधी है।

'आपके जाने से यह युगों की शत्रुता विलीन हो गई, यह बड़ा अच्छा हुआ बड़े राजा !'—पुरोहित मातादीन तिवारी बोले।

'मैंने क्या किया पुरोहित जी ?... कुछ तो नहीं कर पाया....' ठाकुर बोले—'लोचन की जबान के आगे मेरी नंगी तलवार बेहोश होकर गिर पड़ी, फिर नवल बेचारा कैसे नहीं हारता उससे...ऐसा हीरा जवान अब तक दुश्मन बना नजरों की ओट रहा, बड़ा दुख तो इस बात का है...सच मानो, एक दिन की ही देखा-देखी में नवल जैसा प्यार पा गया वह लोचन मुझसे....'

'यह सब आपका बड़प्पन है अन्नदाता !....' मुन्शीजी बोले।

'कुछ नहीं मुन्शीजी !....उसकी आवाज सुनते-सुनते ही सारा क्रोध पानी-पानी हो गया...मेरे पैरों पर पड़े-पड़े ही उसने मेरा सर नीचा कर दिया...जवान जीत गया और बूढ़े ने हारकर उसे अपने में भर लिया मुन्शीजी !....'

'भगवान करे सरकार, क्या कहते हैं लोचन ठाकुर घर-घर जन्म लें....सुनकर ही कलेजा भर आया बड़े राजा !...'

'दुश्मनी इन्सान को नजदीक से पहचानने का मौका नहीं देती बड़े राजा....' नवल बोला।

'ठीक कहते हो छोटे ठाकुर तुम !...नङ्गी तलवार गई थी दुश्मन का गला काटने, मगर सज्जनता की मार से अपनी सारी शान ही गँवा आई....कमल के पत्ते पर पानी की बूंदें नहीं टिक सकतीं, लोचन की मीठी-मीठी बातों पर यह खूंख्वार तलवार भी फिसल पड़ी...इन्सान अपने बड़ा होने का सपना देखता है, मगर इन्सानियत तो छुटाई में ही है...क्यों पुरोहित जी ?...'

'आपका ज्ञान अपार है प्रभु !....' तिवारीजी ने कहा।

'नवल ठाकुर !...मधु, वह किस अन्धे को पकड़ लाई थी ?... देखा नहीं अब तक....'

'यह कोने में तो बैठा है बड़े राजा !...' नवल ने चुपचाप सिकुड़ कर कोने में बैठे हुए पारस की ओर इशारा कर दिया।

'कितना अभागा है बेचारा !' बड़े ठाकुर सदय वाणी में बोले— 'जन्म से ही अंधा है ?...'

'जी हाँ !....' कहकर नवल ने पारस को लाकर सामने खड़ा कर दिया।

'हम तो एक ही रात के अँधेरे से ऊब जाते हैं, इसका तो सारा जीवन ही अन्धकारपूर्ण है...बैठ जाओ सूरदास !'

'इसका नाम पारस है बड़े राजा !' नवल ने कहा।

पारस जमीन पर बैठ गया।

बड़े राजा बोले—'भाई वाह ! नाम तो खूब रखा गया है...'

'नाम ही नहीं केवल... इसका काम भी आश्चर्यजनक है....अपनी हवेली में इसी की बनाई मूर्तियाँ हैं...'

'अच्छा !...तब तो जरूर अचम्भे की बात है....' बड़े राजा गौर से उस अन्धे को देख रहे थे।

'इसमें दैवी चमत्कार है बड़े राजा ! देखिये मैं आपको दिखाता

है...मुन्शीजी !...ओ मुन्शीजी !....लाओ इधर अपना हाथ।'

नवल ने मुन्शीजी का बायाँ हाथ पारस को पकड़ा दिया।

पारस चुपचाप मुन्शीजी का हाथ सहलाने लगा अपने दोनों हाथों से। फिर बोला—'मुन्शी बाबू ! मर्द होकर कान में सोने का गहना पहनते हो ? बुढ़ापे में चश्मा तो ठीक है, मगर अधपके बालों पर कालिख लगाना तो ठीक नहीं...'

मुन्शीजी झेंप गए, बोले—'यस सर ! यह तो देखता है...'

सभी सन्नाटे में आ गए थे। बड़े राजा एकदम पारस का लम्बा-चौड़ा मस्तक पढ़ रहे थे। कितना सुन्दर, कितना भोला और अंधा होते हुए भी कितना आश्चर्यजनक है यह गरीब !

'पारस ! तुममें अजीब गुण हैं...कहाँ से सीख सके यह विद्या ?...' पूछा बड़े राजा ने।

'सीखा नहीं सरकार ! आप लोगों का पैर छूते-छूते यह थोड़ी-बहुत परख आ गई है....आपके चरण किधर हैं अन्नदाता...' टटोल कर पारस ने बूढ़े ठाकुर के पैर पकड़ लिए—'अहा, इस पैर तले कितनों को सरन मिलती है....धन्न भाग हमारे जो सरकार के चरन इस गरीब के हाथों में आ समाये...राजा के माथे पर पाँच रेखायें हैं—क्यों न हों, राजा जो ठहरे....गरीब परवर ! छाती पर कभी तलवार की चोट भी खाई थी क्या ?'

'बस करो बेटे !....' गद्गद् कण्ठ से बड़े राजा बोले, पारस का हाथ पकड़कर—'तुम बहुत बड़े हो। परीक्षा हो चुकी तुम्हारी....यहाँ आ गये हो तुम, तो मैं देखूंगा कि तुम्हारे हाथों को कुछ टटोलने की जरूरत न पड़े...नवल यह गरीब नहीं, हमारा मेहमान है....इसकी खातिरदारी में कोई कमी न खटके बेटा !...इसकी बहन भी तो आई है....दोनों को कभी कोई कष्ट न हो !...'

'दुहाई सरकार की....' पारस विह्वल वाणी में केवल इतना ही कह सका।

'देखो पारस ! कभी फुर्सत मिले तो इस बूढ़े की भी एक मूर्ति बना देना....' बड़े राजा बोले !

'बनाऊँगा अन्नदाता ! बूढ़े की शकल मौत तक एक-सी रहती है। जवानी की सूरत तो छन-छन पर बदलती है सरकार ! पहले भगवान की मूरत बनाकर फिर आपकी ही शुरू करूँगा...यह अन्धा बोझ बनकर नहीं रहेगा गरीबनिवाज ! पहले काम करेगा, बाद को अपना पेट भरेगा...'

'मैं तुम पर बहुत खुश हूँ पारस ! इसे अपना ही घर समझो—'

'सब आपकी ही दया है सरकार ! मेरी तो किस्मत ही फिर गई आपके पैर छूकर....' पारस बोला—'इतने दिनों तक पड़ा-पड़ा रो रहा था, अब हँसने की साध लग पड़ी है अन्नदाता ! आपका पाँव पूजने लायक मैं नहीं, इसका अधिकार आपने मुझे दिया, इससे ज्यादा एक अन्धे को और चाहिए ही क्या ?...'

• •

पारस अब हवेली का ही एक सदस्य बन गया था। बगीचे के पास वाला एक एकान्त कमरा उसे दे दिया गया था, जिसमें बैठकर वह मूर्तियाँ गढ़ता था। बगल का ही एक दूसरा कमरा उसे और माला को सोने के लिए दिया गया था।

बड़े राजा की आज्ञा से पारस सभी की आँखों का तारा बन चुका था। अच्छा पहनना, अच्छा खाना, अच्छी नींद सोना—और उसे चाहिए ही क्या ? मधु तो उस विचित्र कलाकार के पीछे पागल थी। उसकी हर तकलीफ का उसे ख्याल रहता था। उसकी कला ने मधु को विमुग्ध कर लिया था।

पारस अपने कमरे में बैठा हुआ, हाथ में छेनी-हथौड़ा लिये पत्थर के बड़े से टुकड़े को मूर्ति का रूप देता रहता तो मधु पास ही

बैठी हुई उस महान कलाकार के हाथों का संचालन देखती। कभी उसने पारस के मुख की ओर गौर से न देखा, केवल उसके हाथों की गति देखते-देखते वह बेहोश हो जाती। जब तक पारस कार्य में रत रहता, वह भूली-भूली-सी बैठी देखती रहती। कभी-कभी उसके कार्य में सहायता करती।

जब पारस थक जाता तो वह उसका हाथ पकड़कर चारपाई पर ला बिठाती। कहती—'अब थक गये हो बहुत, आज रहने दो।'

'नहीं हजूर !...थका तो नहीं हूँ...जितना आराम मिलता है मुझे उतना काम भी तो करना चाहिये...आप मेरे लिए इतना कष्ट क्यों करती हैं ?...'

'इसमें कष्ट की क्या बात है, कलाकार !...मेरी मदद से अगर तुम्हारी कला को बल मिले तो यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है... कुछ खाओगे ?...लाऊँ...'

'अभी रहने दें...माला कहाँ है ?...'

'छोटे ठाकुर के कमरे में होगी...रेडियो सुनने का चस्का लग गया है...'

'यहाँ आकर वह मुझे भूल गई है हजूर !...अपने अन्धे भाई की जरा भी चिन्ता नहीं उसे...गाँव में तो मेरी परछाई बनकर रहती थी, यहाँ आई तो यहाँ के आकर्षण में ही बँधकर रह गई।'

'अभी नादान है वह, तुम्हें कोई कष्ट तो नहीं, जो वह तुम्हारी चिन्ता करे...मैं तो हूँ ही....'

'आपकी तकलीफों का शुक्रिया हजूर ! आप न होतीं तो माला मुझे भूखा ही मार डालती...कभी नादान ने पूछा भी तो नहीं कि उसका भैया खाना खा चुका है या नहीं...कभी सोचता हूँ माला की बेवफाई तो दिल उचट जाता है मूरतें बनाने से—बुरा न मानें आप ! माला मेरी कारीगरी की जान है....वह मेरे जितने पास आ चुकी है, उतने पास दूसरों को आने में अभी काफी समय लगेगा सरकार !....' कहते-कहते पारस की अन्धी आँखों की कोरों पर पानी

की बूंदें छलक आतीं और वह आवेश में आ अपना माथा ठोंकने लगता।

'आज बहुत काम कर चुके तुम....तभी तो सर दर्द करने लगा....लाओ दाब दूं....'

'नहीं सरकार! यह नाचीज आपकी इतनी बड़ी ममता का अधिकारी नहीं....जिसकी सेवा मेरी जान में जान डाल सकती है, उसे तो जैसे मेरी परवाह ही नहीं...अपने जरा से आराम के लिए आपको इतनी बड़ी तकलीफ क्यों दूं ?....'

मगर मधु मानती नहीं, धीरे-धीरे पारस का सर दबाने लगती। पारस को कुछ शान्ति मिलती तो वह चुपचाप पड़ा रह जाता। मधु काफी देर तक उसका सर दबाती रहती।

'पैर भी दाब दूं कलाकार ?...'

'नहीं हजूर!....नहीं!...कौन-सा मुंह लेकर आपसे पैर दबवाऊं ?....आपका हाथ लगते ही ये पैर पत्थर के हो जायेंगे... पत्थर की मूरतें तो मैं गढ़ ही लेता हूं, मगर उसमें जान डाल देना मेरे बस की बात नहीं, फिर अपने पथरीले पैरों में कैसे जान डालूंगा सरकार ?...नहीं-नहीं, आप रहने दें....'

मधु के हाथों को पारस जबरदस्ती अपने पैरों पर से हटा देता।

'आप जाकर आराम कीजिये हजूर! और जरा माला को हमारे पास भेज दीजिये....'

× × ×

माला ने यहाँ आकर देखा कि पारस के पास मधु हमेशा बनी रहती है और उसकी हर तकलीफ का बेहद ध्यान रखती है। उसने सोचा, पारस को एक दूसरी बहन मिल गई है तो अब उसको उसकी जरूरत ही क्या है।

नवल का कमरा उसे बहुत भला लगा। रेडियो उसके लिए एकदम नई चीज थी। नादान लड़की सब कुछ भूल गई। भूल गई

कि उसके बिना उसके अन्धे भाई को शायद खाना भी अच्छा नहीं लगता। सोते तो दोनों साथ-साथ ही थे, परन्तु माला काफी रात बीते आती तो पारस सो गया रहता और तड़के ही उठकर चली जाती, तब तक पह सोया ही रहता।

भाई का सजग प्रेम बहन के साहचर्य के बिना तड़प रहा था अन्दर ही अन्दर...और बहन की नादानी अपनी उपेक्षा का बदला ले रही थी उससे।

'अरी ओ माला!...यह क्या कर रही है...छोड़ उसे....बिगड़ जायगा कि नहीं—'दिन भर रेडियो के पास बैठी रहती है।'

दित भर रेडियो के पास बैठी रहती हूं तो निकाल दो न?...मैं अपने से चलकर तो नहीं आई हूं...तुम्हारी बीवी तो लाई है यहाँ!....' माला बोली।

'तुझसे हजार बार कहा कि मधु मेरी बीवी नहीं है, मगर तू मानती ही नहीं....'

'कैसे मानूं जी!....नौकर-चाकर सभी तो उन्हें बीवीजी कहते हैं....' माला बिगड़ कर बोली।

नवल हंस पड़ा उसकी नादानी पर, तभी मधु आ पहुँची।

देखकर नवल बोला—'आओ मधु! बहुत दिनों पर दीख पड़ी....लगता है अब तुम यहाँ रहती ही नहीं....'

'क्या करूं?...पारस की कला ने मुझे बेदम कर दिया है। दिन-दिन भर बैठकर उसकी गति देखा करती हूं....एक बड़ी-सी त्रिमूर्ति वह बना चुका, आजकल बड़े राजा की मूर्ति बना रहा है। बड़े राजा भी आज उधर आए थे, देखकर बहुत खुश हुए....माला! जा तुझे पारस ने बुलाया है....'

'मुझे क्यों बुलाया होगा....मैं उनकी कौन हूं? सब कुछ तो तुम्हीं हो, जाकर उन्हें संभालो....'

'यह लड़की कितनी नादान है नवल ठाकुर....देखो, कैसी-कैसी बातें कह जाती है—पारस इसका भाई है, मेरा कौन?....'

'तुम्हारा भी तो भाई बन बैठा है आजकल....' माला बोली।

'अच्छा भाई झगड़ा मत कर....तू ही अकेली उनकी बहन बन कर रह !....ऐसी अजीब लड़की तो मैंने देखी ही नहीं, जो किसी को अपने भाई की बहन भी बनने नहीं देती...जा तू, पारस के सर में दर्द है तुझे बुलाया है...'

'लो जाती हूँ मगर छोटे राजा से मेरी शिकायत मत कर देना... इन्होंने मुझे एक साड़ी देने का वादा किया है....'

माला कमरे से बाहर आई और पारस के कमरे की ओर चली।

कमरे के दरवाजे पर पहुँची ही थी कि भीतर से जोरों का धड़ाका सुनाई पड़ा।

'भैया !...' चीखकर माला भीतर घुसी। देखा, पारस फर्श पर गिरा हुआ है। चारों ओर पानी ही पानी फैल रहा है।

'क्या हुआ भैया ?....' माला ने पारस को उठाते हुए पूछा।

'कुछ नहीं हुआ माला !....तू आ गई ?...बुलाता नहीं तो शायद इस अन्धे की याद भी न आती तुझे ?....कोई बात नहीं....प्यास लगी थी, पानी ढालने लगा तो गिर पड़ा।'

माला ने पारस को चारपाई पर लिटा दिया। बदन छूकर बोली—'गर्म है यह तो....बुखार कब से पाल रखा है भैया ?....'

'बीमारी पाली नहीं जाती माला ! अपने आप आकर मेहमान बन बैठती है यह तो....'

'तुम्हारी बहन ने कुछ खोज-खबर नहीं ली !'

'कौन बहन, तू ही तो ?....'

'मैं नहीं मधु !...माला का सारा हक जो छीन बैठी है....तुम्हें खाना खिलाती है, तुम्हारे पास बैठी रहती है...'

'माला तेरी आवाज से डाह की बदबू आ रही है...व्यङ्ग मत बोल, किसी को सुख नहीं पहुँचा सकती तो तकलीफ मत दे।'

'माला की अब तुम्हें जरूरत ही क्या है भैया ?...माला बहन बनी भी तो तकलीफ में ही दिन गुजरते थे तुम्हारे। मधु बहन बनी

तो चारों ओर आराम ही आराम....'

'चुप रह माला !...चुप रह !...' पारस तेज स्वर में बोला।

'माला को पागल बनाकर उसकी जबान को नहीं रोक सकोगे भैया ?...पहले तुम्हारे सरदर्द को माला के हाथ की जरूरत पड़ती थी, अब तो वह काम मधु के हाथ कर लेते हैं...'

'माला !....' चिल्लाकर बोला पारस—'शैतान कहीं की !....'

पारस ने आज पहली बार माला पर क्रोध किया था और उसका तमाचा खाकर माला तो जैसे बौखला-सी गई।

रोते-रोते बोली वह—'गाँव में माला को तुम्हारा प्यार मिलता था, अब महल में आकर तुम्हारा तमाचा मिलने लगा....माला इसे भूलेगी नहीं भैया कभी !....'

रोती हुई वह बाहर दौड़ गई। सिसकती हुई चली जा रही थी, कि ठकुराइन मिल गईं। पूछा उन्होंने—'क्या हुआ बेटी ?'

'भैया ने मारा है...' माला बोली।

'अच्छा ! अन्धे को गुस्सा भी आता है ? चल तू मेरे पास बैठ।...'

माला ठकुराइन के कमरे में आ बैठी।

'तू उसे क्रोध क्यों दिलाती है ?....' ठकुराइन ने पूछा।

'भैया एकदम बदल गये हैं माँ !....बात-बात पर मुझे झिड़कते हैं...गाँव में कभी एक बात नहीं कही, यहाँ आकर तमाचे तक देने लगे....'

'सुख पाकर सभी की ताकत बढ़ती है बिटिया ! अन्धा है न ! उसके तमाचे का कब तक ख्याल करेगी ?...' बोलीं ठकुराइन !

तभी—'बहू !....' बड़े राजा का स्वर सुनकर ठकुराइन उठ खड़ी हुईं। चेहरे पर लम्बा घूँघट खींच लिया उन्होंने।

बोलीं—'आइये !....' बड़े राजा आकर पलंग पर बैठ गये। ठकुराइन जमीन पर बैठ गईं।

'यह भी यहीं है ?....' बड़े राजा माला को देखकर बोले—'बड़ी उदास है....'

'पारस ने इसे मारा है....' ठकुराइन ने कहा।

'यह भी कम शैतान नहीं है बहू...कर दी होगी कोई गलती...जा माला !...नवल के कमरे में बैठ...'

माला चली गई तो ठाकुर बोले—'बहू ! एक बात कहनी थी....इस नवल के विषय में....'

'कहिये...नवल सयाना भी तो हो गया है...मधु के साथ रहते-रहते कहीं उसका दिमाग न फिर जाय...'

'पागलपन है...साथ पढ़े हैं तो क्या कभी हँस-बोल भी नहीं सकते आपस में ?...नवल ऐसा नहीं ! उसे अपनी इज्जत का ध्यान तो होगा ही....बजगवाँ गया था तो लोचन ने अपनी बहन अचला की बात चलाई थी। मुझे तो कुछ बुरा नहीं लगता...'

'आप जो समझें, मुझे कोई एतराज नहीं हो सकता—दोनों जागीरों में सम्बन्ध हो जाय तो अच्छा ही रहेगा...'

'तो लिख दूँ लोचन को ?....उसका आदमी पत्र लेकर आया है...'

'लिख दीजिये !...' ठकुराइन ने कहा।

बड़े ठाकुर उठ खड़े हुए। नवल के कमरे से रेडियो की तेज आवाज आ रही थी। चुपचाप बैठी हुई माला मराठी का कोई गीत सुन रही थी। उसे क्या, सुई घुमा दी...जहाँ लग गई वही गाना।

भाई का तमाचा थोड़ी ही देर में भूल गई वह।

तीसरे पहर नवल आया, वह बोली—'छोटे ठाकुर ! तुमने साड़ी देने का वादा किया था मुझे....आज ही दे दो न...'

'मैं काम से जा रहा हूँ फिर ले लेना....'

'नहीं....नहीं....देकर ही जाओ....'

'अच्छा ले...' नवल ने मधु की एक अच्छी-सी साड़ी निकाल कर माला को दे दी। बोला—'इसे पहन ले....मैं चला....'

नवल चला गया। माला साड़ी पहनकर फिर रेडियो सुनने लगी। रात को नवल जब कमरे में सोने आया तो उसने देखा माला रेडियो बजता छोड़कर उसके पलंग पर सोई है।

नवल ने रेडियो बन्द किया, फिर माला को जगाने लगा मगर गाँव का शरीर गुलगुले गद्दे की नींद से नहीं जग सका।

लाचार नवल दूसरे कमरे में जाकर सो रहा।

× × ×

रात भी पारस को नींद नहीं आई।

उसे तेज ज्वर था। शाम को उसने खाना भी नहीं खाया था। अधूरी मूर्ति पर दो-चार चोटें भी नहीं कर सका था बेचारा!

रात बीतती जा रही थी। पारस की आँखें माला को खोज रही थीं, मगर माला तो आई ही नहीं। पारस का तमाचा खाकर जाने कहाँ पड़ रही। उसे तमाचा मारकर पारस भी कम दुखी नहीं था। जिसे उसने अन्धी आँख ले-लेकर पाला-पोसा, उस पर चोट करके वह स्वयं जख्मी न हो, यह असम्भव था।

कभी करवटें बदलते, कभी चारपाई पर उठकर बैठते और कभी ज्वर में बड़बड़ाते पारस की वह रात कट गई।

सवेरा हुआ। पारस उठकर माला की चारपाई टटोलने लगा। शायद धोखा देने के लिए वह चुपके-चुपके आकर सो गई हो।

मगर पारस के अभ्यस्त हाथ जो किसी वस्तु का एक ही अङ्ग छूकर उसका आकार समझ लेते थे, चारपाई टटोल हारे, फिर भी माला नहीं मिली! पारस का सर फटा जा रहा था। पैर ज्वर की शिथिलता से बेकाम हो रहे थे। फिर भी छेनी-हथौड़ी ले वह बड़े राजा की मूर्ति के पास आ खड़ा हुआ। हाथ चलने लगे। आँखों से पानी बहता रहा। बदन काँपता रहा!

बड़े राजा आये। मूर्ति देखकर बोले—'भाई वाह! एक दिन ज़रा-सा पैर छूकर ही तुमने मेरी यह शकल गढ़ दी? तुम बिलकुल

अनोखे हो....' बड़े राजा चले गये तो मधु आई।

'कलाकार! आज इतने सबेरे ही कार्य प्रारम्भ कर दिया तुमने ?...'

कलाकार की जबान शान्त रही।

हाथ चलते रहे। पैर काँपता रहा। आँसू बहते रहे।

देखकर मधु बोली—'यह क्या ?...आँसू!...बोलो मुँह से कुछ—क्या हो गया है तुम्हें कलाकार ?...'

'कुछ नहीं हुआ हजूर मुझे...आँसू बह रहे हैं, सो भी इस मूरत का मैल धोने के लिए...कलाकार का हर काम उसकी कला के लिए होता है सरकार!....'

'तुम्हारे पैर भी काँप रहे हैं...देखूँ तो...उफ् तुम्हें तो इतना तेज ज्वर आ गया है...छोड़ो औजार....चलकर आराम करो....'

'आज मुझे अकेला छोड़ दें...आप चली जायँ...मुझे आराम की जरूरत नहीं...मैं काम करूँगा...' पारस का स्वर तेज था।

'तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं...कल खाया भी नहीं....कुछ खाओगे ?...'

'कुछ नहीं...मुझे आपका भोजन नहीं चाहिये....' चिल्लाकर बोला पारस—'मुझे मेरी माला चाहिए...मुझे मेरी कारीगरी की जान चाहिए...आप लोगों ने उसे छीन लिया है....आप चली जायँ हजूर! इस गरीब अन्धे को थोड़ी शांति ले लेने दें...'

मधु गमगीन होकर चली गई। माला को उसने तुरन्त भेजा।

माला ने देखा—पारस के हाथ तेजी से चल रहे हैं। चलते ही जा रहे हैं। गति में शिथिलता नहीं, तेजी है।

बड़बड़ा रहा है वह—'मेरी कारीगरी की जान है! समझती है पारस से उसके बिना एक मूरत भी नहीं बनेगी....मैं बनाऊँगा... माला से अलग होकर पारस मूरतें गढ़ेगा...कोई रोक नहीं सकता....'

'भैया !....मेरे भैया ! मुझे माफ कर दो...' दौड़कर माला पारस
गले से लिपट गई—'भैया तुम्हें बुखार है....काम बन्द कर दो....'

'आ गई तू माला !...' पारस का स्वर गम्भीर था—'कैसे याद आई बहन ?...रात में कहाँ थी आज तू....'

'नहीं आ सकी भैया...सो गई थी...'

'कहाँ ?....'

'छोटे ठाकुर के पलंग पर....'

पारस के कान में जैसे किसी ने बर्छी चुभो दी हो। हाथ रुक । पैरों का कम्पन बढ़ गया।

'तुम्हें बुखार है भैया !....' माला पारस का गम्भीर मुख देख डर गई थी।

'मैं जानता हूँ....' पारस के हाथ फिर चलने लगे—'तू मेरी छोड़....तेरा बदन आज इतना चिकना कैसे हो रहा है ?...'

'यह तो रेशमी साड़ी है भैया !...'

'रेशमी...हूँ !....' हाथ चलते जा रहे थे। टक-टक हथौड़ी की ज हो रही थी—'मधु ने दी होगी तुझे....'

'नहीं....छोटे ठाकुर ने दी है।'

'......' पारस का शरीर जोरों से काँपा। कम्पन में हथौड़ा गया। मूर्ति के मुख का एक बड़ा-सा चप्पड़ चोट खाकर नीचे पड़ा। मूर्ति बिगड़ गई। पारस के हाथ से खून बहने लगा।

'भैया, तुम्हारी उँगली....' माला चिल्लाई—'उँगली तुम्हारी जख्मी हो गई भैया !...खून....'

'दूर रह....' पारस रुष्ट स्वर में बोला—'आँसू पोंछने के लिए तेरे हाथ नहीं उठ सके तो खून पोंछने के लिए मुझे तेरी जरूरत नहीं...मुझमें ताकत है...'

'मुझे माफ कर दो भैया !...'

'लुच्ची कहीं की....तू कहती है, मैं बदल गया हूँ और बदल गई तू !....तेरा दिल यहाँ लग सकता है, क्योंकि यहाँ आकर्षण है....

मेरे लिए माला नहीं तो कुछ भी नहीं....दौलत के आईने में पैसा देखने वाली लड़की ! भाई की अंधी गरीबी में तुझे कौन-सा सुख ही मिला था ?...अब जी भर कर सुख भोग....'

पारस लड़खड़ाता हुआ आकर चारपाई पर लेट गया । माला ने उसे छूना चाहा तो उसने उसका हाथ झटक दिया । डरकर माला दूर खड़ी रही । लोग मनाकर हार गये, मगर पारस ने दिनभर कुछ खाया नहीं । किसी को अपना बदन भी छूने नहीं दिया ।

कलाकार के हृदय की व्यथा केवल मधु ही समझ सकती थी, परन्तु हठीले मूर्ति-शिल्पी के आगे वह भी हार गई ।

रात हो आई । बुखार से तपते-तपते पारस का बदन आग हो चला था । रोते-रोते माला भी सो गई थी ।

पारस का मस्तिष्क उड़ा जा रहा था । ज्वर की गर्मी से कलाकार की भावुकता और वेगवती हो उठी थी । माला ने उसके साथ दगा की है । माला ने गरीबी के बन्धन को तोड़कर अमीरी से नाता जोड़ा है । माला भाई के आंसू पोंछने के लिए छोटे ठाकुर की दी हुई रेशमी साड़ी पहन कर आई है । माला उसकी कला की प्रेरणा होने के बदले, उसकी अशान्ति हो गई है ।

माला नीच है, पतित है । माला धन की नदी में बह गई है। माला ने भाई की गरीबी में पला हुआ शरीर छोटे ठाकुर की एक रेशमी साड़ी पर कुर्बान कर दिया है । माला को अन्धे कारीगर की आह से ज्यादा छोटे ठाकुर के रेडियो की आवाज प्यारी है । माला तो बदल गई है ! माला गिर गई है ।

पारस झटके के साथ उठा । कमजोर पैर लड़खड़ा कर सँभल गये । उसने अपना झोला कन्धे से लटकाया, जिसमें उसका छेनी-हथौड़ा पड़ा था, कोने में रखी छड़ी उठाई, फिर माला की चारपाई के पास आ खड़ा हुआ । कांपते गर्म हाथों से उसने माला के पैर छुए, फिर कमरे से बाहर हो गया ।

सबेरे नींद खुली तो माला ने देखा, पारस की चारपाई खाली थी। खूँटी पर देखा, झोला गायब ! कोने में देखा, लाठी नहीं !

'भैया !....' माला चीख उठी—'पारस भैया !....'

वह जोरों से चिल्लाती हुई बाहर आई।

'क्या हुआ ?....' मधु, नवल आदि आ पहुँचे।

माला आर्तनाद कर उठी—'मेरा भैया !....मेरा पारस !....'

'क्या हुआ पारस को ?....' मधु ने पूछा।

'कमरे में नहीं है....झोला-लाठी कुछ भी नहीं है...'

'कहाँ गया वह ?....' नवल भी हैरान था।

तभी मुन्शीजी आ पहुँचे। बोले—'क्या कहते हैं, पारस तो आधी रात को मेरे मकान पर दिखा था। मैं बाहर ही लेटा जग रहा था। पूछने पर कहा कि एक काम से जा रहा हूँ। क्या कहते हैं...'

'भैया !....' माला चिल्ला उठी। जोर-जोर से रोने लगी वह।

मधु सशङ्कित हो उठी। वह पारस का दर्द पहचानती थी। भावुकता में पड़कर कलाकार अपनी जान न दे दे।

माला दौड़कर मधु के पैरों पर लोट गई। रोती-रोती बोली—'तुमने मेरे भैया को लूटा है....तुमने मेरा पारस चुराया है....मुझे दो....मुझे मेरा भैया वापस ला दो....भैया !....पारस भैया !' माला के करुण-रुदन से सभी का कलेजा दहल गया।

मधु कभी माला की ओर देखती और कभी पारस की सूनी कोठरी की ओर। पारस के इस प्रकार चले जाने से सभी सन्न हो उठे थे। वह शिल्पी था, अन्धा भी था और था अद्भुत कारीगर कि उसकी समानता सारी दुनिया के लिए असम्भव थी। इन थोड़े ही दिनों में अपनी कला और अपने व्यवहार से उसने सभी के दिल पर एक ऐसा निशान अङ्कित कर दिया था कि उसका मिटना बड़ा कठिन था।

वह भले ही दूर चला जाय, परन्तु उसकी याद, उसके सुन्दर चेहरे पर जड़ी दो शुष्क आँखें, उसके मुख से निकले हुए, आदर के

कुछ शब्द कभी भुलाये नहीं जा सकते थे। मधु को वह अत्यन्त प्रिय था। उसके हृदय में उस अन्धे कलाकार ने एक ऐसी जगह बना ली थी, जहाँ से उसका दूर होना असम्भव था।

मधु के लिए पारस एक मासूम बच्चा था, एक लापरवाह भाई था, एक गरीब दोस्त था, एक अनोखा हमदर्द था। मधु को ऐसा लगता था जैसे पारस से उसका जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध हो।

और माला का तो वह भाई था ही—

परन्तु सहिजनवाँ आकर जाने कैसा जादू माला पर फिर गया, जाने कौन सी शङ्का उसके हृदय में घर कर गई कि उसने अपने अशक्त भाई के आँसू से खुशी के दीपक जलाये, उसके दिल की जलन को उसने अपनी लापरवाह हँसी से ढँक दिया।

उसके चले जाने पर अब माला को होश आया है।

वह सर धुन रही है—रो रही है—तड़प रही है....और आस-पास खड़े हुए मधु, नवल, मुन्शीजी, ठकुराइन आदि उसकी इस दशा से दुखी हैं।

माला का रुदन अब पारस तक नहीं पहुँच सकता। वह दूर चला गया है—इतनी दूर कि माला को छूकर आती हुई हवा भी उसके पास तक न पहुँचे। उसकी बनाई हुई कुछ पूर्ण और अपूर्ण मूर्तियाँ पड़ी हैं। लग रहा है जैसे सभी रो रही हों, सभी पर उदासी-सी छाई हो।

'चुप रहो माला !....' मधु ने उसका हाथ पकड़कर उठाना चाहा। माला ने उसका हाथ झटक दिया और स्वयं उठकर खड़ी हो गई।

मधु की आँखों में आँखें डालकर बोली वह—'क्या कहती हो ?'

मधु सहम गई, माला का वह रौद्र रूप देखकर, जैसे दर्द से तड़पती मृगी पल भर में ही घायल शेरनी बन गई हो।

दो पग पीछे हटकर बोली मधु—'अब रोने से कोई लाभ नहीं माला ! पारस चला गया है, तुम्हारे रोने से वापस नहीं आयेगा....'

'रोने की ताकत तुम क्या समझोगी ?....' माला रूखे स्वर में बोली—'कभी तुम्हारी आँखों में आँसू उगे होते तो समझती.... हँसी-खुशी में जिसके दिन बीत जाते हों, उसे रोने का मौका ही कब मिल पाता है ?....यही तो तुम चाहती थी न कि भैया मुझे छोड़कर चले जायँ, मुझसे दूर हो जायँ....अन्धा आदमी क्या समझे कि कौन नागिन है और कौन रेशम की डोर....पारस भैया को अब तुम्हारी आँखें मिल गई हैं न, तभी तो वे यहाँ से जा सके ?....नहीं तो माला की आँखों के बिना उन्हें रास्ता कौन दिखाता ?...'

'बेकार की बातें करती हो माला तुम...' बोली मधु।

'बेकार की !....तुम्हारे लिए माला की आवाज तो बेकार है ही। तुम भैया को बहकाकर यहाँ ले आई, अब मुझसे छीनकर उन्हें न जाने कहाँ भेज दिया ? तुम्हारे दिल में दर्द होता तो तुम मेरी बेकार की बातें समझ पाती। कभी तुमने अपना भाई खोया होता तो जान पाती मेरे आँसू की कीमत....' माला रोने लगी।

'होश में आओ माला ?....' मधु ने उसे शान्त करने का प्रयत्न किया।

'तुम्हीं होश में नहीं हो....मेरे भैया को देखकर लुट बैठी.... तुम्हीं ने उन्हें छिपाया है। मेरे भैया को वापस दे दो। मेरे बिना वे रो रहे होंगे। मुझसे दूर रहकर वे जिन्दा नहीं रह सकते। मुझ पर दया करो....मेरा भैया वापस दो....' कहती हुई माला मधु के पैरों पर गिर पड़ी और जोर-जोर से रोने लगी !

मधु ने अपना पैर खींचना चाहा परन्तु माला उसे जोर से पकड़े हुए उसके पैरों पर अपना सर पटक रही थी।

सभी चले गये थे। केवल बूढ़े मुन्शीजी अब तक वहीं खड़े थे और आश्चर्य में भर कर माला का पागलपन देख रहे थे।

मधु ने निराश दृष्टि से मुन्शीजी की ओर देखा। उसकी करुणापूर्ण आँखें कह रही थीं कि इस माला की नादानी से लड़ना

उसके लिए असम्भव है। मुन्शीजी आगे बढ़े और उन्होंने झुककर मधु के पैरों पर पड़ी माला को उठाया।

'उठो बेटी ! क्या कहते हैं तुम इन लोगों का साथ छोड़ो....मेरे घर चलो....' वे बोले।

माला ने अपनी आंसू भरी आँखों से मुन्शीजी की ओर देखा।

बोली—'मेरा भैया ! मुन्शी बाबू ! मेरा भैया वापस ला दो....'

'ला दूँगा—तू घबड़ा मत....आ मेरे साथ....'

'नहीं मैं यहीं रहूँगी...'

'जिद मत कर बेटी !...क्या कहते हैं यहाँ वाले तुझे दुःख देते हैं न, फिर मेरे साथ क्यों नहीं चलती तू। क्या करेगी यहाँ रहकर ? रोते-रोते तेरी जिन्दगी खत्म हो जायगी, मगर पारस नहीं मिलेगा तुझे....उसे पाने के लिए खोज करनी पड़ेगी तुझे....'

'तुम्हीं खोजकर ला दो मेरे भैया को मुन्शी दादा !'

'खोई हुई चीज इतनी जल्दी नहीं मिलती माला ! कुछ दिन धीरज तो रख, फिर देख वह मिलेगा कैसे नहीं ?...'

'भैया गांव चले गये होंगे...'

'पगली कहीं की ! तेरा गांव इतनी दूर तो है नहीं कि तू वहाँ तक पहुँच न सके ! चल मेरे घर...कुछ खा-पी ले, कल तुझे किसी लठैत के साथ तेरे गांव भेज दूँगा....'

'अगर भैया वहाँ न मिले तो !....'

'वह वहाँ जरूर होगा'—बोले मुन्शीजी—'अन्धा आदमी क्या कहते हैं और जायगा कहाँ ? अगर वह वहाँ न हो तो तू लठैत के साथ फिर यहाँ चली आना। बाद को मैं उसकी खोज करता रहूँगा ! अगर तू क्या कहते हैं घबड़ायेगी तो कुछ काम नहीं हो सकेगा...अब चल घर चलें—'

मुन्शीजी माला को साथ लेकर अपने घर चल पड़े।

● ●

मुन्शीआइन अपने घर के दरवाजे पर बँधी गाय को भूसा डाल रही थीं। बड़ी-सी भूरे रङ्ग की नागौरी गाय को मुन्शिआइन बहुत प्यार करती थीं। उसकी सेवा में ही उनकी दैनिकचर्या का अधिकांश समय व्यतीत होता था। अपनी नानी के आदेशानुसार वे गाय को माता समझती थीं और गोबर को परम पवित्र !

बेचारे मुन्शीजी जब कभी आफत की मार से किसी नीच जाति को छू लेते थे और मुन्शिआइन को पता चल जाता था तो वे उन्हें गोबर मिश्रित पञ्चगव्य पिलाकर शुद्ध कर लेती थीं।

बूढ़ी मुन्शिआइन जी-जान से गोमाता की सेवा करती थी, ताकि मरने के बाद वे उसकी पूँछ पकड़कर बैतरनी नदी सरलता से पार कर सकें। गाय के नाद में भूसा डालकर मुन्शिआइन ने हाथ जोड़ा और बोलीं—'गोमाता ! भोग लगाओ....'

परन्तु उनके कहने के पहले ही गोमाता भोग लगाने में तल्लीन हो गई थीं। सेवा से छुट्टी पाकर मुन्शिआइन ने कमर सीधी की तो उनकी नजरें दूर पर आते हुए मुन्शीजी को देख गयीं।

आश्चर्य हुआ उन्हें—

आज उनके मुन्शीजी बड़ी जल्दी लौट आये हवेली से।

मगर उनके पीछे-पीछे यह कौन चला आ रहा है? लड़की है कोई....राम-राम....चल तो ऐसी रही है जैसे दुनियाँ में केवल इसी ने जवानी का मुँह देखा हो !

एक जवानी मुन्शिआइन की थी कि लोग उनका पैर तक देखने को तरस जाते थे। मुँह की नाक तो लम्बे घूँघट में छिपी ही रहती थी, हाथ की उँगली तक कोई देख नहीं पाता था।

आजकल की लड़कियों का क्या कहना ! जमीन पर खिलती हैं

और आसमान पर महकती हैं।

मुन्शीजी पास आते जा रहे थे। मुन्शिआइन तनकर खड़ी हो गयीं। कैसा मुन्शीजी के पैर से पैर मिलाकर चल रही है कलमुँही।

और मुन्शी को इस बुढ़ापे में यह भैंस पालने का शौक क्यों हुआ? घर में कोई बच्चा नहीं है तो यह सौत ला रहे हैं। भगवान सन्तान देना चाहता तो मुन्शिआइन की कोख क्या कम थी?

'मुन्शिआइन! ओ मुन्शिआइन!....' मुन्शीजी ने दूर से ही पुकारा!

मुन्शिआइन आक्रमक भाव से सीधी खड़ी हो गयीं।

'देखो जी! इसे देखो!'—मुन्शीजी पास आकर सामने खड़े हो गये।

'देख तो रही हूँ....' मुन्शिआइन गरजकर बोलीं—'मर जाने पर सौत लाते—इतनी जल्दी क्या पड़ी थी? बेटे का मुँह देखने के लिए बहुत तरस गये...'

'क्या कहती हो मुन्शिआइन?....क्या कहते हैं, तुम्हारे लिए यह तो एक बेटी लाया हूँ...घर उजाला कर देगी तुम्हारा। दिन-रात कोयल-सी कूँकती रहेगी... माला बेटी! मुन्शीआइन के पैर छू जल्दी....'

माला ने झुककर मुन्शिआइन का पैर छुआ।

मुन्शिआइन का रंग बदल गया। सौतियाडाह के स्थान पर मातृत्व की झलक मुँह पर आ बैठी। उन्होंने झपटकर माला को उठा लिया और गौर से उसका मुख देखने लगीं।

'बेटी लाये हो मेरे लिए मुन्शी?...' मुन्शिआइन माला का मुख उसी प्रकार उलट-पलट कर देखने लगी, जैसे मुन्शीजी बही के पृष्ठ उलटते थे—'कहते हो, घर मेरा उजाला कर देगी? कोयल-सी कूँकेगी यह?....'

'इसे पहचानती हो तुम....'

'तुम्हीं पहचान लो तो अच्छा....मेरी बेटी बनाकर लाये हो इसे इससे बढ़कर और क्या इसकी पहचान देना चाहते हो मुझे।'

'मूरतें बनानेवाला वह अन्धा छोकरा था न, उसी की बहन है यह....' मुन्शीजी बोले।

'उसकी बहन ?....'

'हाँ! पता नहीं किस बात से रूठ गया वह, और इसे छोड़ कर चला गया...आज ही रात को तो....'

'आँख रहते जब मरद इतने बेदर्द होते हैं, फिर अन्धों की तो बात ही क्या ?....अरे, वह बड़े ठाकुर आ रहे हैं क्या....'

कहकर मुन्शिआइन ने थोड़ा घूँघट निकाल लिया और कुछ पीछे हटकर दरवाजे की आड़ में हो गईं।

माला भी उन्हीं के पास जा खड़ी हुई।

मुन्शीजी बड़े राजा से मिलने के लिए थोड़ा आगे बढ़ गये।

'कैसे तकलीफ की सरकार ?...इधर पधार कर गरीब पर बड़ा बोझ लाद दिया बड़े राजा!...' मुन्शीजी हाथ जोड़े खड़े हो रहे।

'ऐसे ही चला आया मुन्शीजी ?...' गम्भीर स्वर में बोले ठाकुर—'पारस के चले जाने से लगता है जैसे दिल पर कोई बड़ा धक्का लग गया हो। अनजाने लोगों के दिल पर अधिकार कर लेना कोई मामूली बात नहीं....'

'आप आज बहुत दुखी मालूम होते हैं बड़े राजा!'

ठाकुर उनकी बात का कोई जवाब न देकर बोले—'तुम आज मुझसे बिना मिले ही चले आये मुन्शीजी ?'

'अभी लौटकर आ रहा था सरकार! माला को पहुँचाने चला आया था....' मुंशीजी ने कहा।

'कुछ बातें करनी हैं तुमसे....'

कहकर ठाकुर घूम पड़े और चलने लगे। मुन्शीजी पीछे-पीछे चले और नरायन लठैत सबसे पीछे। सुनसान स्थान में एक कुआँ था

और पास ही पत्थर का एक चबूतरा भी। बड़े राजा उसी पर जा जा बैठे। इशारा पाकर नरायन वहाँ से दूर जा खड़ा हुआ।

'बैठो मुन्शी....' ठाकुर ने कहा।

मुन्शीजी नीचे बैठने लगे।

'इस पत्थर पर बैठो, एक दोश्त की हैसियत से....'

'ऐसा मेरा कलेजा नहीं सरकार कि बगल में बैठ सकूँ....' मुन्शीजी बड़ी नम्रता से बोले। बड़े ठाकुर का हर कार्य आज उन्हें आश्चर्य में डालता जा रहा था।

'तुम्हें बैठना पड़ेगा मुन्शीजी! मेरा हुक्म है....' बड़े राजा बोले।

'सरकार का हुक्म सहिजनवाँ की हवा भी नहीं टाल सकती.... बैठ जाता हूँ राजा! क्या कहते हैं कभी-कभी पैर की जूती के भाग्य भी जाग उठते हैं....'

'पैर की जूती मत कहो अपने को मुन्शीजी! इस समय तुम्हें अपना दोस्त बनाकर अपने दुख का भार हल्का करना चाहता हूँ!'

'आप बहुत रञ्ज में हैं बड़े राजा! वैसे तो दुःख की बात दूसरों से कहनी नहीं चाहिये—

'रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय।'

मगर कह देने से क्या कहते हैं बोझा हल्का हो जाता है।

'तुमसे कहूँगा मुन्शीजी! बूढ़े का दुःख बूढ़ा ही समझ सकता है...' बड़े राजा ने एक ठण्ढी साँस ली—'लोग समझते हैं ठाकुर को कोई दुख न होगा। अपने दुख की बात तो मैं भी भूल चुका था, आज अचानक याद पड़ गई, जाने क्यों?'

ठाकुर रुक गये।

'कहते चलिए सरकार!'

'इंसान चाहे तो अपने भले कामों से अपनी बुराई पर पर्दा डाल सकता है। मैंने भी पर्दा डाल दिया था और आज रियाया मुझे

, महात्मा, ईश्वर सभी कुछ समझती है—मगर जवानी में की जक जरा-सी गलती बुढ़ापे में कमर तोड़ देगी, इसे कौन जानता ?....मैं एक भेद की बात तुमसे कहूँगा मुन्शीजी ! छिपा सकोगे ?...'

'जानवर को सिर्फ कान होते हैं सरकार ! जबान नहीं....मुझे समझ कर क्या कहते हैं आप सारा भेद बेखटके कह डालिए....' न्शीजी ने कहा।

'सुनो !' बड़े राजा की आकृति और भी गम्भीर हो गई—'मेरे भाई की मृत्यु उनकी शादी के साल भर बाद ही हो गई। उस तक मैं अविवाहित था। भाभी जवान थीं। उन्हें कोई सन्तान भी न थी। वे आधी जायदाद की हकदार भो थीं....'

मुन्शीजी एक टक ठाकुर की ओर देखते हुए उत्सुकतापूर्वक वह गाथा सुन रहे थे !

'भाई को मरे सालों बीत गये। धीरे-धीरे भाभी के मन से उनकी याद जाती रही। मैंने सोचा, यदि भाभी को मंजूर हो तो हम दोनों शादी कर लें। इस तरह मैं पूरी जायदाद का मालिक बन जाता। ठाकुरों में बड़े भाई की स्त्री से शादी करने की चलन है.... भाभी बड़ी गम्भीर स्वभाव की थीं। सुन्दरता के साथ गम्भीरता अच्छे स्वभाव एवं सच्चरित्रता का प्रमाण है। भाभी से वह बात करने का साहस मुझमें नहीं हो रहा था। खासकर यह देखते हुए कि भाभी मुझे तब तक बच्चा ही समझती आ रही थीं !'

'तब तो उनसे कहना व्यर्थ था सरकार....'

'मगर मेरा पागलपन तो देखो मुन्शीजी !'—बड़े राजा कहने लगे—'एक दिन मैंने साहस बटोर कर उनसे कह ही तो दिया !'

'क्या कहा आपने ?'

'बहुत कुछ कहा और बड़ी देर तक कहता रहा....और भाभी में दूध का गिलास लिए चुपचाप खड़ी सुनती रहीं—'

'बोली नहीं कुछ ?'

'नहीं...' ठाकुर ने कहा—'जब मैं चुप हो गया तो उन्होंने दूध का गिलास मेरे आगे बढ़ा दिया। मैं दूध का गिलास हाथ में लिए उनकी ओर देखने लगा कि शायद वे कुछ कहें। मगर उनके गम्भीर चेहरे पर एक भी भाव ऐसा नहीं उभरा जिसे मैं पढ़कर सन्तोष कर सकता। गिलास देकर वे तेजी के साथ चली गयीं अपनी कोठरी में....'

'चली गयीं ?....तब तो क्या कहते हैं बड़ा धक्का लगा होगा आपको सरकार !'

'मैं उस रात सो नहीं सका मुन्शीजी ! जागता चारपाई पर पड़ा रहा। तबीयत बेचैन थी। जैसे मैंने कोई बहुत बड़ा अपराध कर डाला हो। भाभी अपने मन में क्या सोचती होंगी, सोच-सोचकर मैं स्वयं ग्लानि में डूबा जा रहा था। जी चाहा कि चलकर माफी माँग लूं। परन्तु रात के दो बजे जवान विधवा भाभी के पास जाना क्या उचित था....'

'नहीं राजा कभी नहीं...उन्हें आप पर और शक हो जाता... क्या कहते है औरत की जात एक अनबूझ पहेली है अन्नदाता.... तुलसीदास तक तो समझ नहीं पाये....'

'तो मैं मनमारे पड़ा ही रहा। भाभी के पास माफी के लिए नहीं गया...सुबह कमरे से बाहर निकला तो ऐसा लगा कि मैं रात भर में ही औरत से अधिक लज्जालु बन गया हूं! भाभी रोज की तरह नाश्ता लेकर आईं, मगर मैं सर नीचा ही किये रहा। उनकी आँखों में देखते ही न बना मुझसे....भाभी ने मुझे नाश्ता करने के लिए कहा। उनकी आवाज और दिनों से बहुत मीठी सुनाई दी। वे उस दिन कुछ अधिक देर तक मेरे पास रुकीं....'

'शायद वे भी रात भर तक जागती रही होंगी ?....'

'हो सकता है—मैंने बात ही ऐसी कह दी थी जिस पर काफी विचार करने की जरूरत थी....तो उस दिन मैं भाभी से बचता-बचता

रहा । उसके बाद मैंने भाभी में एक परिवर्तन जरूर देखा । उस दिन के बाद भाभी ज्यादातर मेरे ही पास रहने लगीं । मेरी जरूरतों पर उन्होंने पहिले से भी अधिक ध्यान देना शुरू किया । महराजिन के रहते वे मुझे अपने हाथों परस कर खिलाने लगीं । बात-चीत के सिलसिले में उनके मुख की गम्भीरता कभी-कभी मोहक हास्य का रूप धारण करने लगी ।'

'तब तो सरकार....'

'मैं भी भाभी का इरादा कुछ-कुछ समझने लगा । मेरी खुशी का ठिकाना न रहा और दिन-प्रतिदिन हम लोग और भी निकट आते गये । अब भाभी बेखटके मेरे पास चारपाई पर बैठने लगीं । मेरे सर में तेल भी कभी-कभी डाल दिया करती थीं । दूध का गिलास लेते समय कभी हम दोनों के हाथ जब छू जाते थे तो जाने कैसी छुई-मुई-सी शकल हो जाती थी उनकी । कभी उनका हाथ पकड़ कर बैठाने लगता था तो जान-बूझकर वे अपना बदन ढीला कर देती थीं और लुढ़क कर....'

'सरकार ! आपके कहने का ढङ्ग इतना अनोखा है कि यह बूढ़ा दिल भी जवान हो चला....आगे कहिए राजा !....'

'कहते-कहते मैं उन्हीं दिनों का सपना देखने लगा था मुन्शीजी । उन दिनों को क्या भूल पाऊँगा कभी ?...सोचता हूँ, क्या आनन्द था उस आँख-मिचौनी में ?...'

'कब तक यह आँख-मिचौनी चलती रही ?....'

'थोड़े ही दिनों तक'—बड़े राजा बोले—'उसके बाद आई वह भयानक रात....' रुक गये ठाकुर । उनके मुख की गम्भीरता भयानक हो चली । मुन्शीजी डरकर कुछ दूर पीछे खिसक गये ।

'दीवाली की शाम ?....चारों ओर इतने दीपक जल रहे थे कि आसमान के तारे भी लजा उठे थे । सारी हवेली जगमगा रही थी और उसी जगमग के बीच मैंने भाभी को देखा । देखकर देखता ही रह गया मुन्शीजी ।'

'आसमान से क्या कहते हैं चाँद उतर आया होगा सरकार। और आप चकोर बने एकटक देखते रह गये होंगे, अपना सब कुछ भूलकर'—मुन्शीजी जितना पीछे खिसके थे, पुनः उतना ही आगे आ गये।

'कुछ न पूछो मुन्शीजी! भाभी का वह रूप कितना मनोहारी था, इसे दिखाने के लिए गुजरे दिन कैसे वापस लाऊँ? उस दिन कितने ही दीपक जल रहे थे परन्तु उस अकेले दीपक की रोशनी सबसे निराली थी। ऐसी चमकदार कि आँखों के रास्ते दिल में पैठ जाय। भाभी ने उस दिन शृंगार किया था। सफेद धोती के स्थान पर जरीदार साड़ी, हाथों में काली नागिन-सी लिपटी चूड़ियाँ, आँखों में काजल की ऐसी प्यारी काली डोर कि हिरन की पुतलियाँ भी बन्द हो जायँ....'

'आगे कहिये बड़े राजा!'

'भाभी का सौन्दर्य देखकर उस दिन मेरी आँखें बन्द हो गयीं... रात आई....आधी रात!....दीपावली के दीपक बुझ चुके थे। चाँद अन्धकार की चादर ताने सो रहा था बेसुध!....मेरी आँखों की नींद उड़ चुकी थी। भाभी का सौन्दर्य बार-बार सामने आ जाता। बड़ी बेचैनी थी मुन्शीजी! जिस चीज का पाना बहुत आसान था उसे पाने के लिए मैं क्यों इतना अधीर हो उठा था, इसे आज तक न जान पाया...'

'फिर क्या हुआ अन्नदाता?...'

'दरवाजा खटका, कोई अन्दर आया। मैंने आँखें बन्द कर लीं। कोई दबे पाँव पास आकर खड़ा हो गया। नाक में नारी शरीर की एक ऐसी सुगन्ध गई कि मैं बेहोश-सा हो रहा...समझ रहे हो मुन्शीजी?...'

'कुछ-कुछ सरकार....बहुत-कुछ...'

'भाभी विचलित हो उठी थीं मुझसे भी ज्यादा। असहाय नारी

उस रात पुरुष की वासना का सहारा खोजने आई थी। तब तो मेरे जीवन में पाप की एक ऐसी आँधी उठी जिसका झोंका इस बुढ़ापे में भी शान्त नहीं हो सका है। दो शरीरों में जो कुछ दूरी रह गई थी, उस रात वह भी जाती रही।'

'इसके बाद क्या हुआ सरकार।'

'एक सप्ताह बाद ही सुदामापुर के ठाकुर आये। उनसे पता चला कि मरने के पहले भैया ने मेरा विवाह उनकी लड़की से पक्का कर लिया था। हमें या भाभी को तो कुछ पता था नहीं, मगर भैया का पत्र ठाकुर के पास मौजूद था और यही था सबसे बड़ा प्रमाण! मरने के एक ही दिन पहले भैया ने पत्र लिखा था और कुछ कहने भी न पाये थे कि कुएँ में गिर पड़ने से दुनिया ही छोड़ देनी पड़ी उन्हें... मैंने तो शादी से इनकार कर देना चाहा, मगर भाभी ने समझाया और भैया के जबान की इज्जत और घराने के धाक की याद दिलाई। लाचार मुझे राजी होना पड़ा।'

रुककर बड़े राजा ने एक गहरी साँस ली।

'यह तो बड़ी बुरी बात हुई सरकार!'

'प्यार की सेज पर खार होते ही हैं मुन्शीजी! भाभी ने हठ करके उस समय तो मेरी शादी करा दी परन्तु उसका अञ्जाम उन्हें मालूम न था। यदि वे जानती कि दीवाली की रात की जरा-सी बात उनके आँचल में धब्बा लगा देगी तो वे कुल मर्यादा को तिलाञ्जलि देकर मेरे साथ शादी जरूर कर लेतीं। मगर इन्सान की ताकत के ऊपर एक दूसरी भी ताकत थी मुन्शीजी, जो भाभी के जीवन के साथ खेल रचना चाहती थी। मेरी शादी के तीन महीने बाद भाभी को मालूम हुआ कि उन्हें गर्भ है...'

'गर्भ?....' मुन्शीजी चौंककर बोले।

'हाँ!...विवाहित लोग सन्तान के लिए ईंट-पत्थर तक पूज डालते हैं किन्तु वे तरसते ही रह जाते हैं। परन्तु अविवाहित लोगों

का जरा-सा पाप नौ महीने बाद बोलने लगता है। जिस समय भाभी को अपने गर्भ का निश्चय हो गया, उनकी क्या हालत हुई होगी, इसे तो वही जानें क्योंकि उस त्यागमयी नारी ने किसी से कोई बात न बताई। जिस कुल मर्यादा के लिए उन्होंने मेरी शादी करवाई थी, वही उनके गर्भ से धूल-धूसरित होने वाली थी। परन्तु मुन्शीजी! उस देवी ने अपने कुल पर जरा भी आँच न आने दी। एक दिन मैंने उठ कर देखा, भाभी लापता थीं। जाने कहाँ चली गई थीं, मेरे लिए एक पत्र छोड़कर, जिसमें उन्होंने गर्भ रह जाने की बात लिखी थी। इसके बाद बहुत दिनों तक उनका कुछ पता न मिला। मैंने सोचा आत्महत्या कर ली होंगी। परन्तु सन्तान के प्रति नारी का मोह बड़ा ही प्रबल होता है मुन्शीजी! उसने भाभी को आत्महत्या नहीं करने दी....'

'तब ?....उनका पता चला या नहीं ?...' मुन्शीजी ने पूछा।

लठैत पलटू को आते देखकर राजा चुप हो रहे।

पलटू पास आकर बोला—'सरकार बजगवाँ से लोचन ठाकुर की पाती लेकर हरकारा आया है....'

'चलता हूँ....' कहकर बड़े राजा उठ खड़े हुए—'अब फिर कभी सुनना मुन्शीजी !...' कहकर बड़े राजा चले गये।

मुन्शीजी दिल पर चिन्ता का बोझ लादे भारी पैरों से अपने घर की ओर लौटे। आज बड़े राजा ने उन्हें अपने जीवन की जो कहानी सुनाई थी, वह उनके लिए एकदम नई थी। उसका कुछ भी हिस्सा कभी उनके कानों तक नहीं पहुँचा था। एक जमाना भी तो गुजर चुका था उस घटना के व्यतीत हुए और समय की तीव्र गति ने उसकी सारी याद लोगों के दिलों से भुला दी थी।

मुन्शीजी उस घटना पर विचार करते हुए घर की ओर आगे बढ़ते जा रहे थे। दरवाजे के बाहर ही टाट का टुकड़ा बिछाकर मुन्शिआइन बैठी थीं और माला को बगल में बिठाये उसे कुछ समझा

रही थीं। बातें करते-करते उनका हाथ विचित्र ढङ्ग से उठता और माला के कन्धे पर थपकी देता हुआ पुनः अपने स्थान पर आ जाता था।

तब तक पहुँच गये मुन्शीजी। उन्हें देखकर मुन्शिआइन खड़ी हो गयीं। बोलीं—'कैसी बेटी लाये हो तुम मुन्शीजी ? जो दो-एक दिन भी इस घर में बेटी बनकर नहीं रहना चाहती ?'

'क्या बात है मुन्शिआइन ?...क्या कहती है माला ?'

'कुछ न पूछो जी ! अपने भाई के लिए बहुत रो रही है। कहती है, जब तक अपने भैया को देखकर माँफी न माँग लेगी तब तक न कुछ खायेगी और न सोयेगी ही...पागल है यह मुन्शी ! समझाओ तो भला इसे कि दाना-पानी छोड़ देने से क्या इसका भाई वापस लौट आएगा ?'

'यह लड़की बहुत सयानी है मुन्शिआइन ! अपने भगवान को खुश करने के लिए क्या कहते हैं तुम भी दाना-पानी छोड़ देती हो और व्रत रहकर उनकी पूजा करती हो ?'

'तुम तो लगे इसी के मन की बातें करने...' मुंन्शिआइन बोली—'जरा इसे समझा-बुझाकर रोको तो....अभी बजगवाँ के ठाकुर का हरकारा इसी राह से होकर हवेली गया है....'

'वह घनश्याम है मुन्शी दादा !....' बोली माला—'कोई पाती लेकर हवेली गया है। मैंने कह दिया है उससे, लौटती बेर मुझे भी साथ लेता जायगा —मुझे जाने दो मुंशी दादा ! भैया के बिना मेरा दिल कहीं भी नहीं लग सकता....'

'क्या कहते हैं, तुझे कोई बाँध थोड़े ही रखा है पगली ! यहाँ जी नहीं लगता है तो चली जा....दो-चार घण्टे तक ही तुझे बेटी पुकार कर हम लोग अपनी साध बुझा लेंगे...मुन्शिआइन ! इसे कुछ खिला-पिला दो भाई !...'

'यह लो, लड़की कहती है वह कुछ छुयेगी ही नहीं और तुम

खिलाने-पिलाने की रट लगा बैठे। तुम्हीं मनाओ इसे तो शायद माने, मैं तो हार चुकी।'

'हठीली है यह मुन्शिआइन! देखना, इसके हठ-जोग से इसके भाई को दौड़ते हुए इसके पास आना पड़ेगा...औरत, औरत का कहा नहीं मानती तो मेरा क्या मानेगी...क्या कहते हैं...मैं तो अब हवेली जाता हूँ। हरकारा आवे तो इसे उसके साथ कर देना...'

मुन्शीजी के जाने के बाद मुन्शिआइन और माला आँगन में आ बैठीं। तभी घर के दरवाजे पर एक घुड़सवार आकर रुका।

घोड़े पर से उतर कर उसने आवाज दी—'माला....'

दौड़कर बाहर आई माला।

मुन्शिआइन आँखों में आँसू भरे पीछे ही खड़ी थीं। माला उनके पैर छूकर बोली—'भैया के बाद मुझे तुम्हारा ही प्यार मिला है दादी! इसे माला भूलेगी नहीं कभी। भूल-चूक मेरी माफ करना....'

घनश्याम घोड़े पर चढ़ चुका था। उसने हाथ पकड़ कर माला को भी अपने पीछे बिठा लिया। घोड़े को चलते देखकर मुन्शिआइन की आँखों के आँसू बूढ़े गालों पर बह चले।

रुँधे गले से वे घनश्याम से बोलीं—'देखना भैया! इस लड़की को कोई तकलीफ रास्ते में न होने पाये...'

घोड़ा दौड़ चला, दो घण्टे की सफर के बाद बजगवाँ का किनारा चमका। माला के चेहरे पर हँसी और रोने के भाव साथ-साथ आये।

कोठी के सामने पहुँच कर घनश्याम ने उसे नीचे उतार दिया।

माला धीरे-धीरे अपनी झोपड़ी की ओर बढ़ी। उसका हृदय अब प्रबल वेग से स्पन्दित हो रहा था, आँखें चारों ओर फिर रही थीं कि शायद किसी ओर पारस की सूरत नजर आ जाय।

अपनी करुण दीवारों के साथ खड़ी झोपड़ी का एक कोना गिर गया था। खपरैल टेढ़ा होकर लटक गया था। दीवार में कोने पर

एक बड़ा-सा छेद दिखाई पड़ रहा था।

माला का हृदय धक से हो गया।

इन कुछ ही दिनों में कितना ही परिवर्तन हो गया था। टूटी-फूटी झोपड़ी अब तो खण्डहर बन गई थी।

फिर भी इन्सान को शरण देने के लिए खण्डहर में पर्याप्त जगह थी। माला ने बाहर से ही पुकारा—'भैया!....'

परन्तु एक ही बार पुकार कर वह रुक गई। उसने देखा—झोपड़ी का दरवाजा बाहर से उसी प्रकार बन्द था, जैसा वह छोड़ गई थी। वह धड़ाम से वहीं गिर पड़ी और दरवाजे की धूल में अपना मुँह रगड़ने लगी।

× × ×

अचला ने आज सवेरे से ही कुछ नहीं खाया है।

तीसरा पहर ढल रहा है, फिर भी वह अपने कमरे में चारपाई पर लेटी है। रह-रहकर बाहर की आहट लेने लगती है, शायद किसी के आने की विकल प्रतीक्षा कर रही है।

अचला में बहुत बड़ा परिवर्तन हो चुका है। और उसके इस परिवर्तन की बात उसकी माँ लक्ष्य कर रही है। ठकुराइन जानती हैं कि बेटी के दिल में नवल ठाकुर के लिए बहुत बड़ा स्थान बन गया है।

यद्यपि अचला ने अपनी जबान से अब तक इस विषय में कुछ भी नहीं कहा था, फिर भी अनुभवी ठकुराइन उसी एक दिन में ही सब कुछ समझ गई थीं, जब नवल घायल होकर उनकी कोठी में पड़ा था और सदा की आलसी अचला बड़े उत्साह के साथ उसकी सेवा कर रही थी। तभी तो जब दूसरे दिन बड़े ठाकुर बजगवाँ आये थे तो ठकुराइन के कहने पर लोचन ने अचला और नवल के विवाह की बात चलायी थी। इसके बाद कितने ही दिन बीत गये।

और एक दिन ठकुराइन ने लोचन से कहा कि वह बड़े राजा

को पत्र भेजकर उन्हें नवल और अचला के विवाह के विषय में स्मरण दिला दे। लोचन ने अपने विश्वासी घनश्याम के हाथ बड़े ठाकुर को एक पत्र भेजा। घनश्याम कल का ही गया हुआ अब तक नहीं लौटा है और उसी की प्रतीक्षा इस समय अचला बेचैनी से कर रही है।

एक-एक पल युग के समान व्यतीत हो रहा है। घनश्याम के लौटने पर ही अचला के भाग्य का निर्णय होने वाला है। पता नहीं बड़े राजा उसे स्वीकार करेंगे या नहीं ? पता नहीं उसकी पीड़ा की औषधि मिल पायेगी इस जीवन में कभी या नहीं ? कौन जाने उसकी खोई नींद कभी पलकों पर आयेगी भी या नहीं।

'अचला ?...ओ अचला !....'

लोचन के कमरे से ठकुराइन ने पुकारा। विचारों में निमग्न अचला बेतरह चौंक पड़ी। कपड़े सँभाल कर चारपाई पर से उठ खड़ी हुई। मुँह पर आँचल फेरकर वहाँ की वेदना दूर की।

फिर बोली—'आती हूँ माँ !...' और तब धीरे-धीरे वह लोचन ठाकुर के कमरे की ओर बढ़ी बोझिल पैरों से अनमनस्क-सी।

दरवाजे पर उसने ठिठक कर देखा—घनश्याम आ गया है, लोचन और ठकुराइन गम्भीर बने बैठे हैं।

'क्या है माँ ? ...' अचला पास आकर बोली।

वहाँ की गम्भीरता देखकर वह आशङ्कित हो उठी थी।

'बैठ बेटी !' ठकुराइन बोलीं—'घनश्याम ! तू जाकर आराम कर ?....'

अचला बैठ गई। घनश्याम चला गया।

'माँ !...' लोचन बोला—'अचला को वह खुशखबरी सुना दूँ ?....मैं ही सुनाऊँ तो क्या हर्ज है ?....'

'तू ही सुना दे भाई !...'

खुशखबरी ! सुनकर अचला का मन हरा हो गया, अवश्य बड़े राजा ने रिश्ता मंजूर कर लिया है।

'अचला !...' लोचन कुछ मुस्कराकर बोला—'बड़े राजा ने तेरी शादी नामंजूर कर दी। मैंने तिवारीपुर के जमींदार से बात पक्की कर ली है। तुझे कोई एतराज तो नहीं ?...'

ठकुराइन चुप रहीं। अचला पर हिमालय का एक टुकड़ा आ गिरा। हृदय की धड़कन बन्द होने लगी। अपनी हथेली से मुँह ढँक कर घुटनों पर रख लिया उसने।

'बोल अचला !... तिवारीपुर के ठाकुर कोई बुरे नहीं...' लोचन बोला—'रङ्ग जरा बहुत ज्यादा काला है। उम्र भी कोई अधिक नहीं, यही कोई चालीस-पचास के भीतर। जमींदारी बहुत बड़ी है। ठाकुर साहब इतने नम्र हैं कि रियाया से जूतों की ठोकर से बातें करते हैं। किसी की नाक पर मक्खी बैठी देखते हैं तो उसकी नाक ही जड़ से साफ कर देते हैं, ताकि फिर कभी मक्खी वहाँ न बैठ सके। सीधे तो इतने हैं कि एक ही आँख से सारी दुनिया को देखते हैं। बहादुर तो ऐसे हैं कि बचपन में ही कुश्ती लड़ते समय अपनी एक टाँग गँवा बैठे। शानदार तो ऐसे हैं कि तनकर चलते-चलते बुढ़ापे के पहले ही उनकी कमर पीछे की ओर झुक गई है धनुष की तरह...कैसा दुल्हा खोजा है मैंने तेरे लिए अचला ?'

ठकुराइन हँस पड़ीं। अचला की दुनिया उजड़ गई। स्वप्न जग कर वीभत्स हो चले। आशायें आसमान की डोर तुड़ा जमीन पर गिरकर सिसकने लगी। पृथ्वी की स्थिर छाती अचला को काँपती-सी लगी, भूकम्प की तरह।

वह उठी और रोती हुई अपने कमरे की ओर दौड़ी।

पीछे से लोचन की हँसी ने उसका पीछा किया।

अचला की जान नहीं निकल रही है, यही बहुत है। पीड़ा तो मृत्यु से भी भयङ्कर हो रही है। आकर अपनी चारपाई पर बेहोश-सी गिर पड़ी वह और सिसक-सिसक कर रोने लगी।

इतनी उम्र में अब तक उसने किसी के साथ कोई बुराई नहीं की

थी—परन्तु आज सारी दुनिया ही उसका कलेजा काट रही है। आज सभी लोग उसका गला घोंट-घोंट कर उसकी जान ले रहे हैं। आज हवा तक उसकी बैरन बन गई है, जो ठण्ढी तो है, परन्तु शरीर में भाले की तरह चुभी जा रही है। तभी ठकुराइन आ पहुँचीं। अचला की बगल में बैठकर वे उसका सर सहलाने लगीं।

'तुम जाओ माँ !....' अचला ने अपना आँसू भरा चेहरा ऊपर उठाया—'भगवान कभी बेटी न दे और बेटी दे तो माँ-बाप-भाई के दिलों में प्यार भी दे....'

'तू तो निरी पगली है लड़की !....'

'लोचन भैया का ही दिमाग बड़ा ठीक है, जो अपनी बहन को काने-लँगड़े, काले-बूढ़े आदमी को सौंपना चाहते हैं...भैया मुझसे जलते हैं माँ !...मैं बताऊँ ? अपने तो उस गोरी छबीली मधु को चाहते हैं—मुझे डर थोड़े ही है। मैं सब कह दूँगी। अपने लिए तो परी खोज रहे हैं और मेरे लिए भैंसा !...माँ मेरी जान ले लो तुम, ताकि लोचन भैया का कलेजा ठण्ढा हो जाय !'

अचला रो-रोकर बोलती ही चली जा रही थी।

'लोचन तेरी हँसी उड़ा रहा था रे !...' ठकुराइन ने कहा—'तुझे खिझाने के लिए झूठ बोल रहा था।

'ठाकुर होकर भी लोचन भैया रोज-रोज झूठ बोलते हैं...क्या यह ठीक है माँ ?'

'बड़े राजा ने रिश्ता मंजूर कर लिया है अचला ! बीस दिन बाद तू पराई हो जायगी...' कहते-कहते ठकुराइन का गला भर आया। अचला के ससुराल जाने की बात सोचकर उन्हें बड़ा दुख हुआ। मगर अचला तो जैसे जमीन पर गिरती-गिरती पतङ्ग-सी आसमान में उड़ चली हो। इतनी खुश हुई वह कि उसके गाल पर बैठी हुई आँसू की बूँदें तक मुस्करा पड़ीं। आवेश में आकर उसने अपना मुँह हथेली में छिपा लिया।

'अभी ही तो घनश्याम लौटा है....पारस की बहन माला भी लौट आई है। पारस कहीं भाग गया उसे छोड़कर....' ठकुराइन ने कहा।

'माला आई है...उससे मिल आऊँ माँ?...'

'मैं समझ रही हूँ तेरे दिल की बात...' ठकुराइन हँसकर बोलीं—'जाना चाहती है तो चली जा। कुछ हाल-चाल ले आ अपने की...'

ठकुराइन उठकर चली गयीं। अचला भी उठी।

वह आज माला से भेंट करके नवल और हवेली की कितनी ही बातें पूछना चाहती थी। ससुराल जाने के पहले वह वहाँ की हवा तक से परिचित हो लेना चाहती थी।

माला झोपड़ी के दरवाजे पर ही पड़ी थी, मानव शरीर-सी, निश्चल बेहोश-सी, गतिहीन मरी हुई नागिन-सी।

'माला!....इस तरह क्यों पड़ी है रे?...उठ!...'

जी रही थी माला! अचला की पुकार सुनकर धीरे से उठ बैठी। गाल पर से बहे आँसू सूखकर एक मटमैली लकीर-सी बन गये थे।

'बड़ी उदास है तू!....पारस चला गया इसीलिए तो?....चल उस चबूतरे पर बैठें....कुछ बातें पूछनी है सहिजनवाँ की....'

अचला ने हाथ पकड़ कर उसे उठाया।

दोनों जाकर चबूतरे पर बैठ गयीं।

'क्या पूछोगी अचला बहन?...' बोली माला—'हवेली कैसी है, छोटे ठाकुर कैसे हैं?...तुम्हारी तो शादी वहाँ होगी, मेरी तो बरबादी हो गई सहिजनवाँ में बहन!'

'तू दुख मत कर रे माला! पारस जा भी कहाँ सकता है?... घूम-फिर कर वापस चला आयेगा, जरूर....'

'सब कुछ वहाँ ठीक है बहन! तुम्हारे रास्ते का बस एक ही काँटा है वहाँ?....मधु ने छोटे ठाकुर को वश में कर रखा है—

उसने नवल ठाकुर पर जादू कर दिया है बहन ! जवान लड़की है, जो भी देखता है, उसे मोह लेती है चुड़ैल !'

माला का क्रोध मधु के प्रति शान्त होने के बदले बढ़ता ही जा रहा था। वह जी भरकर मधु की बुराई करना चाहती थी।

'मुझे वहाँ पहुँचने दे माला ! उसके दाँत न तोड़ दूँ तो कहना.... देखूंगी कि वह कितना जादू जानती है ?...नवल ठाकुर को उँगलियों पर नाच नचाऊँगी....'

माला चुप हो गई।

अचला उसे धीरज देकर चली गई !

• •

नवल आजकल बहुत उदास रहने लगा है। किसी काम में उसकी तबीयत नहीं लगती। अपने कमरे से बाहर भी बहुत कम निकलता है। अपने भविष्य के विषय में उसे बहुत चिन्ता हो आई है और वह उसी चिन्ता में मग्न पड़ा रहता है।

मधु आजकल हवेली में नहीं है। पारस के चले जाने से उसे बहुत गहरा धक्का लगा था। अन्धे पारस के प्रति उसके हृदय में एक अमिट प्रेम की रेखा खिंच गई थी।

तभी मधु ने सुना कि अखिल भारतीय कला परिषद की ओर से दिल्ली में एक अन्तर्राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें देश-विदेश के बड़े-बड़े कलाकारों की कृतियाँ प्रदर्शनार्थ उपस्थित होंगी।

पारस की अद्वितीय कला के प्रदर्शन का स्वर्णिम अवसर था परन्तु वह तो न जाने किस पागलपन में पड़कर भाग गया था।

अन्त में मधु ने पारस की बनाई त्रिमूर्ति को प्रदर्शनी में ले जाने का निश्चय किया। नवल ने मधु के दिल्ली जाने की बात सुनी तो

उसका हृदय रो उठा। मधु का वियोग एक दिन के लिए वह सहन नहीं कर सकता था। एक अन्धे मूर्तिशिल्पी के प्रति मधु की इतनी सहृदयता देख कर नवल का आकर्षण उसके प्रति और भी बढ़ गया।

कितना विशाल है मधु का हृदय।

'मधु !....' नवल ने कहा—'तुम स्वयं न जाओ। तुम्हारे बिना हवेली सूनी हो जायगी...'

'हवेली या तुम्हारा दिल !....' मधु मुस्करा कर बोली—'नवल ठाकुर ! मुझे रोको मत। पारस को दुनिया के सामने खड़ा करने का यह कितना बड़ा अवसर है। मुझे विश्वास है कि पारस की कला का स्थान प्रथम होगा। देश-विदेश के अखबारों में उसका चित्र निकलेगा, उसकी प्रशंसा छपेगी और एक दिन गाँव का ठुकराया हुआ यह अन्धा कारीगर कितना बड़ा हो जायगा....'

'मैं वह मूर्ति किसी दूसरे के हाथ भेज दूँगा, तुम्हारे जाने की कोई जरूरत नहीं ?'

'बिना मेरे गये कुछ काम नहीं होगा नवल ठाकुर ! मैं स्वयं मूर्ति लेकर जाऊँगी और प्रदर्शनी के अधिकारियों से पारस की सारी कहानी सुनाऊँगी। यह भी देखूंगी कि पारस की बनाई त्रिमूर्ति उसके बनानेवाले की पूर्ण जीवन-गाथा के साथ अच्छे स्थान पर रखी जाय, ताकि लोगों का ध्यान तुरन्त आकर्षित हो...मुझे रोको मत छोटे ठाकुर ! अन्धे कारीगर की भलाई करने दो मुझे....'

'जा सकती हो तुम मधु !...' नवल भारी गले से बोला—'मगर बहुत जल्द लौटने की कोशिश करना। तुम्हारे बिना मुझे एक-एक क्षण भारी लगेगा....'

'मैं जाती हूँ नवल !...' मधु बोली, नवल का हाथ पकड़कर—'तुमसे दूर रहकर मुझे भी चैन मिले, यह असम्भव है। प्रदर्शनी में मूर्ति ठिकाने से रखवाकर मैं तुरन्त लौटने का प्रबन्ध करूँगी...'

और उसके दूसरे ही दिन मधु त्रिमूर्ति साथ लेकर दिल्ली चली

गई थी। आज दस दिन हो गए—

न तो मधु ही लौटी और न तो उसका कोई पत्र ही आया। नवल रह-रहकर उद्विग्न हो उठता है। वह देख रहा है कि हवेली में बड़ी साज-सजावट की जा रही है। जागीर का एक-एक कर्मचारी खुशन जर आता है। काम से किसी को फुर्सत नहीं कि नवल इस साज-सजावट का मतलब पूछ सके किसी से।

अन्दर ही अन्दर नवल जैसे सब-कुछ समझ रहा हो, मगर प्रकट रूप में उससे किसी ने कुछ कहा नहीं तो वह क्या अनुमान लगाये। बूढ़े मुंशीजी आजकल बड़े व्यस्त, बड़े खुश दीखते हैं। ढलता बुढ़ापा भी कभी इतना फुर्तीला हो सकता है, इसे अब तो सभी देख रहे हैं।

'छोटे राजा !....' बाहर से मुन्शीजी ने पुकारा।

'आओ मुन्शीजी !....' नवल ने पलङ्ग पर उठकर बैठते हुए कहा।

मुन्शीजी अन्दर आये। चश्मे के भीतर से उन्होंने नवल का चेहरा गौर से देखा। बोले—'छोटे राजा ! खुश नहीं हो क्या ? चेहरा तुम्हारा ऐसा लटका हुआ है जैसे पीपल के पेड़ में मुरदे का घण्ट !....चलो बाहर, क्या कहते हैं दर्जी बैठा हुआ है, कपड़े नपा लो....'

'मेरे पास तो बहुतेरे कपड़े हैं मुन्शीजी ! अभी सिलाकर क्या करूँगा....'

'यह लो ! वाह छोटे सरकार ! शादी-ब्याह में पुराने कपड़ों से तो काम चलेगा नहीं ?'

'किसकी शादी मुन्शीजी ?...' नवल अपने सर पर मँड़राता हुआ वज्र देख रहा था। अब केवल उसके गिरने की देर थी।

'आपकी शादी सरकार !' मुन्शीजी बोले—'लोचन ठाकुर की बहन अचला से...खूब मेहमानी की थी छोटे राजा आपने कि इतना मीठा रिश्ता जोड़ लाये...'

नवल कुछ बोला नहीं। वज्र गिर पड़ा था उस पर। अब उसका संभलना असम्भव था।

'यह रिश्ता कब पक्का हुआ मुन्शीजी ?...' पूछा उसने।

'तुम्हें मालूम नहीं क्या छोटे ठाकुर ?....चार ही दिन तो रह गये हैं ब्याह के...उठिये जल्दी, बाहर बड़े राजा दर्जी के पास बैठे हैं....' मुन्शीजी ने हाथ पकड़ कर नवल को उठाया।

द्रोपदी की चीर-सा असहाय नवल मुन्शीजी के साथ खिंचता चला आया, हवेली के बैठकखाने में।

'आओ छोटे ठाकुर !...' बड़े राजा ने कहा—'कपड़े नपा लो....तबीयत ठीक नहीं है क्या तुम्हारी ?...'

दर्जी उसकी नाप लेने लगा। नवल होश में रहते भी बेहोश हो चला था। दर्जी का काम जब खतम हुआ तो वह चुपचाप हवेली के अन्दर आया और अपनी माँ के कमरे की ओर बढ़ा।

ठकुराइन पलंग पर कई साड़ियाँ रखकर उनका निरीक्षण कर रही थीं। नवल को चुपचाप आकर खड़े होते देख वे चौंक पड़ीं।

हँसकर बोलीं—'क्यों रे नवल ! चोरी-चोरी बहू की साड़ी देख रहा था ?....अरे तू कैसा होता जा रहा है आजकल ?....या भगवान, इधर मैं काम में इतनी लगी रही कि इसकी बीमारी की बात मुझे मालूम भी नहीं हुई ! बैठ नवल !....'

नवल बैठा नहीं। खड़े-खड़े ही बोला—'शादी का इन्तजाम हो रहा है माँ ?...'

'हाँ !' ठकुराइन ने कहा।

'मुझसे पूछा भी नहीं माँ ?...' नवल की वाणी अत्यन्त करुण थी—'रिश्ता पक्का करने के पहले मेरी राय भी न ली तुमने ? इतनी तैयारियाँ हो चलीं और मुझे पता तक न चला ?....'

'तेरी ही भलाई के लिए तो बड़े राजा ने यह सब किया !... ऐसी बातें क्या कभी लड़कों से पूछकर की जाती है....कैसा हो गया

है नवल ? क्या हो गया है तुझे...'

'कुछ नहीं माँ !...मुझसे पहले पूछ लिया जाता तो अच्छा था....'

'क्यों....'

'मैं अभी शादी नहीं करना चाहता था....'

'कि यह शादी तुझे पसन्द नहीं थी ?....' ठकुराइन ने कुछ सोचते हुए पूछा ।

'जो समझो....' कहकर नवल लौट चला । ठकुराइन ने पुकारा परन्तु वह रुका नहीं...सीधे अपने कमरे में आकर पलंग पर लेट गया, आँखें बन्द करके गहरी साँसें लेने लगा ।

मधु की याद लेकर उसने अब तक हर रात रंगीन सपने देखे थे । उसे विश्वास था कि मधु के साथ उसकी दुनिया बसाने में कोई बाधक नहीं होगा । परन्तु अपने दिल की बात अपनी माँ पर प्रकट करने के पहले ही उसके सपने मिट गये, उसका संसार नष्ट हो गया ।

अब तो सारी आशायें मिट चली थीं । अधूरे अरमान सिसक रहे थे । हाथ मलना ही अब शेष था । नवल रेत पर पड़ी हुई मछली की तरह तड़प रहा था । आह मधु ! तुम कहाँ हो ?

आकर देखो तो तुम्हारे नवल को लुटेरे लूट रहे हैं । तुम एक अन्धे को ऊपर उठाने के पीछे अन्धी बन गई हो । नवल के दिल की ज्वाला काश तुम्हारे पास तक पहुँच पाती !

अचला ! अब अचला से नवल की शादी होगी ।

बुरी तो नहीं है अचला । उसे पाकर कोई व्यक्ति निहाल हो जाय । परन्तु नवल, जो सोते-जागते मधु का स्वप्न देखा करता है, कैसे अपने हृदय को अचला के प्रति आकर्षित करे ।

तीसरे पहर—मधु दिल्ली से लौटी । हवेली में चहल-पहल और साज-सजावट देखकर उसे विस्मय हुआ ।

पारस की मूर्ति प्रदर्शनी में अच्छे स्थान पर रखवाकर लौटी थी

मधु। प्रदर्शनी के संयोजक एक अन्धे ग्रामीण द्वारा निर्मित वह मूर्ति देखकर आश्चर्य-चकित हो उठे थे। उन्होंने मधु से कहा कि वह उस कलाकार को प्रदर्शनी में लावे। पारस की खोज करके उसे दिल्ली ले जाने के लिए ही लौटी थी वह।

परन्तु क्या मालूम था कि यहाँ आकर उसे एक ऐसी बात सुनाई देगी कि उसका कोमल हृदय टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जायगा।

'नवल ठाकुर !....'

मधु को आते देखकर नवल उठ बैठा।

'आओ मधु !...बड़ी जल्दी लौट आई तुम ?....'

'ताना दे रहे हो छोटे राजा !...देर हो गई इसकी माफी चाहती हूँ। सच जानो, दिल्ली में हर मिनट तुम बहुत-बहुत याद आते रहे...अरे तुम कैसे हो गये नवल ?....'

मधु बैठ गई, नवल के पलंग पर।

नवल उसका हाथ पकड़कर बेचैनी से बोला—'बस, जो रहा हूँ मधु ! तुम आई हो तो यह उजड़ी दुनिया भी देखती चलो....'

'बड़े मायूस हो गये हो छोटे राजा ! दस दिन में ही तुमने मेरी याद में अपने को ऐसा कर डाला ?....'

दरवाजे के बाहर छिपा हुआ कोई उन दोनों की बातें सुन रहा था।

'बात क्या है नवल ?...इधर तुम ऐसे हो रहे हो, उधर हवेली सज रही है....आखिर क्यों ?'

'मधु !....' बेचैन हो नवल ने मधु को अपनी गोद में खींच लिया। दरवाजे के बाहर छिपी हुई आकृति चौंक पड़ी।

'मेरी मधु ! तुमने मेरे दिल में बस कर वहाँ का अन्धेरा दूर कर दिया था....सोचा था, एक दिन तुम्हें और भी नजदीक से पा सकूँगा....मगर ... मेरी शादी हो रही है मधु ?...चार दिन बाद...'

'किससे ?....किससे नवल ?...'

'अबला से...' नवल के गालों पर आंसू बह चले।

'उफ् !....' और मधु का तो जैसे सारा संसार ही वीरान हो गया। नवल को वह कितना चाहती थी, इसे कौन समझे ?

दरवाजे पर खड़ी आकृति चली गई थी।

मधु नवल की गोद से उठी और जलता हुआ दिल लिए अपने पलंग पर आकर गिर पड़ी। रो रही है मधु। हृदय में आग की लपटें उठ रही हैं और आँखों से सावन-भादों की धार बरस रही है।

उधर—अपने कमरे में ठकुराइन बेचैन-सी खड़ी हैं। 'क्या करूं' क्या न करूं' के पशोपेश में पड़ी हुई उनकी मुखाकृति अत्यन्त गम्भीर हो उठी है। तभी बड़े राजा ने वहाँ प्रवेश किया।

बोले—'मुझे बुलाया है क्या बहू ?....'

'हाँ...' मुँह पर और घूँघट खींचती हुई बोलीं ठकुराइन—'हमने नवल की शादी में बहुत जल्दी कर दी बड़े राजा !'

ठाकुर बैठते-बैठते चौंक पड़े—'क्या कहती हो बहू ?'

'मैंने अपनी आँखों से देखा है बड़े राजा !...'

'क्या देखा ?...'

'मधु को नवल की गोद में ...' ठकुराइन लजाते-लजाते बोलीं—'दोनों एक-दूसरे को बहुत प्यार करते हैं।'

बड़े राजा चुप हो रहे। बड़ी देर तक जाने क्या सोचते रहे। 'बहू ! तुम्हें यह बात क्या पहले से ही मालूम थी ?...' पूछा ठाकुर ने।

'नहीं शङ्का थी....आज आँखों से देखा तो विश्वास हुआ....'

'बड़ी गलती हुई बहू !....नवल ने हमें कुछ बताया भी तो नहीं....'

'अब क्या हो सकता हैं बड़े ठाकुर ?'

'कुछ नहीं बहू !....अब कुछ भी नहीं हो सकता....अब या तो नवल अपनी हठ छोड़े या मेरी जबान कटे....' ठाकुर हताश स्वर में बोले।

'आपकी जबान नहीं कट सकती बड़े राजा ! नवल जैसे बेटे की आहुति मुझे मंजूर है मगर सहिजनवां के ठाकुर की जबान बदले, यह किसी को भी बरदाश्त न होगा...' ठकुराइन ने दृढ़ स्वर में कहा।

'नवल इतना नादान नहीं बहू कि वह मेरी इज्जत को न समझ सके...वह वह ठाकुर है....हर ठाकुर अपने स्वार्थ के लिए खानदानी इज्जत में बट्टा नहीं लगने देता... तुम बैठो, मैं उसके कमरे की ओर जाता हूं....' कह बड़े ठाकुर नवल के कमरे की ओर बढ़े।

मधु ने अपने कमरे में से बड़े ठाकुर को उधर जाते देखा तो वह भी दबे पाँव पीछे-पीछे चली। उसका हृदय धड़क रहा था। आज उसके भाग्य का फैसला था। बड़े ठाकुर नवल के कमरे में घुसे। मधु दरवाजे के बाहर ही छिपकर खड़ी हो गई।

ठाकुर को देखकर नवल हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ—'बाबा !....'

ठाकुर की आँखों में ममता और कर्तव्य का तूफान उठ रहा था, जिसे नवल ने लक्ष्य किया। उसने अपना सर नीचा कर लिया और मूर्तिवत् खड़ा रहा। बड़े राजा ने अपना हाथ नवल के कन्धे पर रख दिया और बड़ी देर तक उसका मुँह देखते रहे।

'बैठो छोटे ठाकुर !....' बड़े राजा ने कहा।

नवल बैठ गया। बड़े ठाकुर भी बैठे। उन्होंने नवल को अपने सीने से लगा लिया और उसका सर सहलाने लगे। नवल को उनका यह व्यवहार आश्चर्यजनक लग रहा था। ठाकुर को देखकर उसने समझा था कि वे उसे जरूर बिगड़ेंगे। ठाकुर की गम्भीरता के पीछे छिपी हुई सहृदयता को बहुत कम लोग देख पाते थे।

'मैं सब जानता हूँ बेटा !...' ठाकुर एकाएक गम्भीर वाणी बोले—'पहले पता नहीं था मुझे...आज मालूम हुआ है, जबकि मेरे हाथों में कोई भी उपाय बाकी नहीं बचा। तुमने मुझसे पहले क्यों नहीं कहा नवल ?....'

नवल कुछ बोला नहीं।

'छोटे ठाकुर ! हमारे खानदान की इज्जत बहुत बड़ी है...इज्जत तभी बढ़ती है जबकि घर का हर आदमी उसके लिए कोशिश करे। तुम्हारा कष्ट समझ गया हूँ बेटा ! मगर अब तो जो कुछ होना था हो चुका। उस पर अधिक सोचना, अपने को व्यर्थ परेशान करना है। मधु इस घर की बेटी बन चुकी है। अब उसे अपनी बहन मानकर जो कुछ हुआ है उसे भूल जाओ नवल !....'

'बाबा !....' चीख पड़ा नवल।

'अब यही रास्ता है बेटे !....तू खुद बुद्धिमान है। मुझे विश्वास है कि खानदानी इज्जत के आगे तू अपने प्रेम की बलि दे देगा...मेरी जबान कटे, यह तू कभी नहीं देख सकेगा, यह जानता हूँ ...दुनिया में सभी की मनचाही नहीं हो पाती। मेरी दशा इस समय बड़ी विचित्र हो गयी है। इधर तेरा ख्याल, उधर ठाकुर घराने की इज्जत का। अब तू ही उबार सकता है नवल !....मैं चलता हूँ। तू अपने को सँभाल ले बेटा।'

बड़े राजा उठकर चले गये तो नवल की वेदना और भी जागृत हो उठी। वह कुछ निश्चय ही नहीं कर पा रहा था कि अपना उजड़ता हुआ संसार बसाये या ठाकुर घराने की इज्जत बचाये। तभी किसी की कोमल हथेली उसकी पीठ पर आ पड़ी।

घूमकर देखा तो मधु ! कुछ सँभलती हुई, कुछ अस्त-व्यस्त।

मधु के इसी स्पर्श ने तो उसे पागल कर दिया है। अनाथालय में पली यह लड़की, जो एक दिन उसके प्रेम का सहारा पाकर ही इस गांव में आ बसी थी, अब कहाँ जायगी ? नवल की शादी अचला से होने के बाद बेचारी मधु किसके प्रेम का सहारा पायेगी ? कैसे कटेगी उसकी जिन्दगी ?

'मधु !....' नवल के स्वर में इतनी वेदना थी कि पत्थर की शिला भी टुकड़े-टुकड़े हो जाय चोट खाकर।

परन्तु मधु का हृदय अविचलित रहा।

'मैं सब सुन चुकी हूँ छोटे ठाकुर !....' बोली वह।

'सुन चुकी हो मधु—सब कुछ ?'

'अब तुम्हें समझाने आई हूँ। सुनोगे मेरी कुछ ?'

'कहो तुम मधु ! मैं सब कुछ सुनता चलूँगा...' कहा नवल ने—मुझे समझाने के पहले तुम जरा अपने आँसुओं को समझा—बेकार बहे आ रहे हैं आँख की राह....'

'पानी की इन बूँदों की अब कीमत ही क्या रही छोटे राजा ! ों से बहता हुआ यह पानी खारा ही तो है—मीठा भी नहीं कि के दिल की प्यास बुझे ?....बहने दो इसे नवल ! इधर दो-चार में आँखों का सारा खारा पानी खतम हो जाय तभी ठीक—को जिन्दगी भर कभी इसे बहने का अवसर भी नहीं मिलेगा....'

मधु नवल के पास बैठ गई और उसका हाथ अपनी कोमल में पकड़ कर सहलाती हुई बोली—'यह सामीप्य अब मुझसे लायगा नवल ! शादी के बाद कभी तुम्हें इतने नजदीक से ही देख सकूँ। जिसे अपने हृदय में प्यार बनाकर पाला अब जीवन भर तक खार बनकर चुभता रहेगा। दुनिया को यही था नवल ठाकुर !....आँसुओं के समुद्र पर ही तो यह संसार रहा है...एक बात कहूँ ?....'

'कह तो रही हो इतना सब कि जिन्दगी भर के लिए एक अमिट बनाती जा रही हो जिगर में ? और भी कहना जो कुछ बचा कह डालो....'

'नारी की जबान कभी खुलकर नहीं बोलती....' कहा मधु ने—अपना सब कुछ लुटता हुआ देखकर आज मैं चुप न रहूँगी... रे सामने इस समय अपने खानदान की इज्जत है। उसके आगे या हमारे प्रेम का कोई महत्व नहीं। त्याग करना ही पड़ेगा...

परन्तु त्याग से पहले क्या तुम मुझे एक बात की इजाजत दे सको हो नवल ठाकुर ?...'

'बोलो....'

'जिन्दगी की सबसे बड़ी साध आज पूरी कर लूँ...अपने पैर तनिक आगे बढ़ाओ...'

नवल ने अपना दोनों पैर मधु के सामने कर दिया।

मधु ने उन पैरों पर अपने काँपते होंठ रख दिये, आँखों से कई बूंद खारा पानी नवल के पैरों पर गिर पड़ा।

नवल ने अपने पैर खींच लिए और मधु का उठाकर अपनी बाहों में जकड़ते हुए कहा—'बस करो मधु! मुझे समझाने आई थी और यहाँ आकर खुद समझने लगी ?'

कहकर नवल ने मधु के मस्तक पर दीर्घ चुम्बन की निशानी अङ्कित कर दी। मधु ने तुरन्त ही अपने को छुड़ा लिया।

कुछ हटकर बैठती हुई बोली—'आज की इस घटना की याद लेकर मैं अपनी जिन्दगी काट लूंगी नवल ठाकुर! अब कभी तुम मेरी आँखों में आँसू नहीं देखोगे। आज की नारी कितनी भी अशक्त है मगर आँखों में पानी और दिल में आग लिए वह जिन्दा तो रह सकती है....मैं अपनी ओर से तुम्हें अचला को सौंपती हूँ। तुम दोनों खुश रहो, यही मेरे जीवन की सबसे बड़ी कामना होगी...'

'मधु!....'

'अब सब कुछ बीत गया समझो नवल ठाकुर! सपने से जगकर वास्तविक जगत में पैर रखो! दुनिया के बन्धन इतने दृढ़ हैं कि हमारी-तुम्हारी ताकत कुछ काम नहीं कर पायेगी...'

'तुम ऐसा कह रही हो मधु! मेरी मधु ऐसा नहीं कह सकती कभी....' बोला नवल।

'मैं ही कह रही हूँ नवल ठाकुर!...प्रेम करना सरल है मगर पाना मुश्किल! इन्सान लाख प्रयत्न करने पर भी जिसे नहीं

सकता, उसे आसमान का तारा समझ कर धीरज दे लेता है अपने मन को...यह तो किस्मत का खेल है छोटे राजा! जिसका शर्बत एक दिन अपने जूते को पिलाया था, उसका स्थान अब तुम्हारी आँखों में होगा और अब तक तुम्हारी आँखों में रहती आई मधु तुम्हारे जूतों में शरण पायेगी....'

'चुप रहो तुम मधु!...अब तो चुप रहो....जिसका कलेजा जमाने ने अपने हाथों से छलनी बना दिया हो, वहाँ तुम्हारे तीरों के लिए अब खाली जगह कहाँ? और घावों में तीर चुभाकर तुम्हें कौन-सा सन्तोष मिल जायगा?...'

'थोड़ा-सा तड़प लो नवल राजा! इस मधु को तो अब जिन्दगी भर तड़पाते रहोगे तुम। पुरुष को एक नारी चाहिए, सो तुम्हें अचला मिल ही रही है। नारी को पुरुष चाहिए, मगर मधु तो तुम्हें पाकर खो बैठी...एक बात याद रखना, अचला के सामने मेरा इतना ख्याल मत रखना कि उसके हृदय में ईर्ष्या जगे। रात को सपनों में कभी-कभी मिल लेना मुझसे, मगर जागते ही मधु को भूल जाना छोटे ठाकुर! नहीं तो ठकुराइन माँ और बड़े राजा इतने यत्न से तुम्हारे लिए जिस घर का निर्माण कर रहे हैं, वह नष्ट न हो जाय...'

मधु उठ खड़ी हुई! नवल ने रोकना चाहा मगर वह चली गई। नवल जानता है कि मधु को कम दुख नहीं फिर भी वह उसके घराने की इज्जत का ख्याल करके ही अपनी दुनिया मिटाने को उत्सुक है।

नारी का हृदय सचमुच पहेली है। कभी वह बड़े से बड़ा त्याग कर सकती है और कभी जरा से अधिकार के लिए झगड़ भी सकती है।

• •

शादी हो गई नवल की, अचला की मुराद पूरी हुई।

प्रथम मिलन के दिन अपनी आशा के विपरीत उसने नवल

को अपने प्रति अत्यधिक सदय पाया। उसका अनुमान था कि नवल मधु के प्रेम में पड़कर शायद उस जैसी पत्नी की उपेक्षा करे।

परन्तु नवल को मधु ने जो सौगन्ध दिलाई थी, उसे वह कभी भूल नहीं सकता था। शिक्षित होने के कारण नवल जानता था कि अचला सर्वथा निर्दोष है और उसके साथ उपेक्षा का व्यवहार करने से एक निरीह नारी के हृदय को ठेस पहुँचेगी।

अब तो अचला के साथ ही उसके जीवन की डोर बाँध दी गई थी, फिर पुराने सपनों को याद कर व्यथा के अतिरिक्त और क्या मिल सकेगा नवल को!

अतः दिल खोलकर नवल अचला से मिला।

पति-प्रेम पाकर अचला निहाल हो उठी। यहाँ आने के पहले नवल के प्रति जो आशंका थी, वह दूर हो गई। परन्तु माला की बातों ने मधु के प्रति जिस घृणा की सृष्टि अचला के हृदय में कर दी थी, वह किसी प्रकार भी दूर नहीं हो सकी।

अचला अब भी मधु से खिंची-खिंची रहती है। कभी मधु कुछ बातें भी करना चाहती है तो वह रूखा-सा उत्तर देकर चुप रह जाती है। मधु सब कुछ समझती है। पिछली आग अभी बुझ भी नहीं पाई थी कि यह एक नई आग और सुलगाने लगी। मधु का ही कलेजा था जो इस प्रकार सब कुछ सहन कर रही थी।

उसका संसार लुट गया था। हवेली के सभी लोग उसके प्रति सर्वथा उदासीन थे। वह नौकरानी बनकर रह रही थी। नवल से साक्षात् होने का अवसर वह नहीं देती थी। शरीर को दिन भर की मिहनत से थकाकर वह अपनी पीड़ा भूल जाना चाहती थी।

दिल्ली से मधु लौट रही थी तो कितनी खुश थी। उसका इरादा था कि पारस को खोजकर तुरन्त उसे साथ ले दिल्ली पहुँचेगी, परन्तु यहाँ आकर उस पर जो वज्रपात हुआ कि वह सब इरादे भूल गई

और अपनी पीड़ा से ही परास्त होकर रह गई।

दुख की याद धीरे-धीरे मिटती है। दिल का जख्म आहिस्ता-आहिस्ता अच्छा होता है। मधु को भी स्वस्थ होने में अभी काफी दिन लगेंगे। समय के परिवर्तन के आगे कुछ भी स्थिर नहीं रह सकता! आज की पीड़ा कल की कहानी बन जाती है।

'मधु बेटी!....' बड़े राजा की पुकार सुनकर मधु चौंक पड़ी।

जल्दी-जल्दी उठकर खड़ी हो गई। तभी बड़े ठाकुर की गम्भीर आकृति ने भीतर प्रवेश किया।

'कैसी तबीयत है बेटी!...'

'अच्छी है बाबा!...बैठिये...'

ठाकुर पलंग पर बैठ गये। मधु उनके पैरों के पास जमीन पर बैठी। बड़े राजा को आज पहली बार अपने कमरे में आते देख उसे महान आश्चर्य हुआ था।

'बेटी!....' बड़े राजा का स्वर पीड़ित था—'तुझ अनाथ के अरमानों को इस ठाकुर ने अपनी खानदानी इज्जत पर बलि दे दी! माँफी माँगने आया हूँ मधु!'

'ऐसा न कहें बाबा!...आपकी शरण मुझे मिली है, इतना क्या कम है?'

'तेरा दुख मैं जानता हूँ....जिन्दगी में तकलीफ न आये तो इन्सान सुखों का दास बनकर अकर्मण्य हो जाता है। इस बूढ़े ने भी कम कष्ट नही उठाया है मधु! जीवन में एक ऐसा तूफान है मेरे, जो इस बुढ़ापे में भी मेरी नींद हराम कर बैठा है। तुझे कुछ समझाने की ताकत मुझमें नहीं...'

बड़े राजा चुप हो गए। मधु ने लक्ष्य किया कि ठाकुर का गला भर आया है। उनके चेहरे की ओर देखा तो आँखें गीली हो चली थीं।

'आपको क्या दुख है बाबा?' साहस कर मधु ने पूछा।

'कल सब लोग पहाड़ पर जायेंगे....' बड़े राजा ने बात बदल कर कहा—'घूमने के लिए....तू भी तो जायगी न बेटी ?'

'कौन-कौन जायगा ?'

'नवल, अचला, मुन्शीजी, लठैत...और तू भी तो ?...'

'मुझे तो कुछ मालूम नहीं बाबा ! किसी ने कुछ कहा भी तो नहीं ।'

'मैं कहता हूँ न, तैयारी कर ले तू...बहुत बड़ा झरना है पहाड़ पर, वहीं सब खाना-पीना करेंगे । तू भी मेरे ही जैसी है क्या जो हवेली में पड़ी रहेगी ।'

'आप कहते हैं तो चली जाऊँगी बाबा !'

फिर थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा ।

एकाएक ठाकुर बोले—'पारस को भूल गई तू मधु ?'

'नहीं तो बाबा ? उसकी खोज कराऊँ....'

'मैं भी उसकी खोज करा रहा हूँ....'

'आप ?...' मधु को आश्चर्य हुआ । भला ठाकुर उस अन्धे की खोज क्यों करा रहे हैं—'किसलिए बाबा....'

'कल दक्खिन की कोठी से एक लठैत लौटा है । उसे पता लगा था कि एक अन्धा कुछ रोज पहले उधर आया था । बड़ा घना जंगल है बेटी ! चीते-शेर-भालू....पारस बचा होगा तो वहीं आस-पास कहीं होगा...उधर ही तो सब घूमने जा रहे हैं । तू चली जायगी तो उसकी खोज भी करेगी...जायगी न ?'

'हाँ !....' मधु बोली—'एक बात पूछूँ बाबा ?'

ठाकुर चुप रहे । जैसे वे जानते थे कि मधु क्या पूछना चाहती है—'पारस के लिए आप इतने व्यग्र क्यों हैं बाबा ?'

'अन्धा था बेटी !'

'कोई दूसरी बात है....मुझे अपनी बेटी मानकर अपना दुख बताओ बाबा !....' मधु धीरे-धीरे ठाकुर के पैर दबाने लगी ।

ठाकुर विचलित से हो बैठे रहे ।

'बताओ बाबा !'

'एक बात है मधु ! बीती बात !...' ठाकुर बोले—'बड़ी दर्दनाक...'

ठाकुर की आंखों से कई बूंद आंसू ढुलक कर मधु के हाथों पर गिर पड़े तो वह महान विस्मय से चौंक उठी।

'आँखों से आंसू निकालने के बदले मुंह से शब्द निकालो बाबा, तभी जी हल्का होगा...' मधु ने कहा—'पारस इतना महान तो नहीं जिसके लिए बड़े ठाकुर इतने व्यग्र हों ?'

'आँसू बड़े दगाबाज होते हैं बेटी ! हृदय की पीड़ा दूसरों के आगे खोल देते हैं....तू अभी बच्ची है मधु ! बड़ों का पाप सुनकर क्या करेगी ?'

'हमारे बाबा पाप नहीं कर सकते....परिस्थितियों ने पाप किया होगा, मुझे विश्वास है....कहो न बा बाबा !...'

'मेरी एक भाभी थीं मधु !....बड़ी नेक....भैया के मरने पर उन्होंने मेरे हृदय में प्रवेश किया। मगर दैव ने मेरे साथ परिहास रचा और मेरी शादी दूसरे से हो गई। भाभी ने कुल कलंक का ध्यान कर एक अंधेरी रात में यह हवेली छोड़ दी....'

'कुल कलंक कैसा बाबा ?'

'यह न पूछ बेटी ! मेरे पाप ने उन्हें उजाड़ दिया था....बहुत दिनोंतक उनका कुछ पता न चला। चार साल बाद मालूम हुआ कि वे बजगवां में पड़ी हुई गरीबी के दिन बिता रही हैं। उन्होंने अपने को चमारिन घोषित कर दिया था ताकि कोई उनकी असलियत न जान सके। मुझे पता लगा तो मैं छिपे-छिपे भाभी से जाकर मिला। अपने कुकर्म के लिए माफी भी मांगी। उन्हें लगभग चार साल की एक लड़की भी थी....भाभी ने हवेली में आकर रहने से इनकार कर दिया, कुल की मर्यादा नष्ट होने के डर से—मगर तब भी वे मुझे प्यार करती थीं। मैं भी गुप्त रीति से कभी-कभी जाकर उनसे मिल आया करता

था। प्रकट रूप में जाने पर बदनामी का डर था, क्योंकि बजगवाँ के ठाकुर से उस समय मेरी बड़ी दोस्ती थी... मगर एक दिन उस ठाकुर ने देख ही लिया और मुझे बेइज्जत करने की कोशिश की। तभी से बजगवाँ से हमारी दुश्मनी शुरू हुई...'

'बाबा! आप यहाँ हैं?...'

ठाकुर ने रुककर देखा, नवल था, बोले—'क्या है छोटे ठाकुर...'

'कल हम लोग पहाड़ पर घूमने जा रहे हैं....' नवल ने कहा!

'मुझे मालूम है....इस मधु को भी लेते जाना...मैं चलता हूँ मधु! तुम कल इन लोगों के साथ चली जाना....'

बड़े राजा उठ कर चल दिए। कहानी अधूरी ही रह गई।

नवल को सामने पाकर मधु की विचित्र दशा हो गई। आज नवल उसके पास इस तरह अचानक आ पड़ा, जैसे गंगा समुद्र की ओर जाना भूल कर गंगोत्री की ओर बह चली हों।

'अच्छी तो हो मधु?....' पूछा नवल ने।

तो मधु के पैर काँप गये। पलकों का बाँध बनाकर उसने अब तक जो महासागर रोक रखा था, वह उफन चला।

बोली किसी तरह—'तुम अच्छे हो नवल ठाकुर! तो समझ लो मैं भी अच्छी हूँ। बड़ा ख्याल रखते हो तुम! मेरा कुशल-मङ्गल पूछते पूछते तुम्हारी जबान थक गई होगी छोटे राजा! इतना कष्ट मत उठाया करो। अभी तुम्हारे हाथों की हल्दी भी नहीं छूटी है...'

'तुम्हीं ने मेरी शादी कराई और अब तुम्हीं ऐसा कह रही हो मधु!'

'मैंने शादी कराई थी तुम्हारी, इसलिए नहीं कि तुम मधु को पत्थर बना डालो—इसलिए नहीं कि तुम पहाड़ पर घूमने की तैयारी करो, मैं बूढ़ी बनी हवेली की रखवाली करूँ। अरमान लुट गये तो क्या, हविश अभी बाकी है नवल ठाकुर! जवान शरीर पलक मारते बूढ़ा नहीं होता। उसके लिए समय चाहिये....तुम लोग घूम-फिर

सकते हो तो मधु भी इसके लिए लालायित हो सकती है...'

'मुझे क्षमा करो मधु ! मैं तुमसे कहना भूल गया था...'

'मधु को तुम भूल सकते हो...मगर मधु के हृदय से तुम अपनी याद कभी भुला सको तब समझूँगी कि मर्द हो...'

तभी पायलों की झंकार सुनाई पड़ी। और जरा-सा सुनने के लिए नवल घूमकर बाहर हो गया। पायल की झंकार दूर जाते-जाते विलीन हो गई। मधु ने कान बन्द कर लिए और पलंग पर जा लेटी।

वह जानती है कि अचला उससे घृणा करती है। उसके हृदय में जाने कैसे उपेक्षा का भाव आ गया है कि मधु की सरलता सिसक-सिसक कर रह जाती है। एक नारी दूसरी नारी से इतनी ईर्ष्या कर सकती है, इसका कारण मधु सोच नहीं पाती और इसीलिए वह और भी व्यथित हो उठती है।

● ●

पहाड़ का मञ्जर मधु को बेहद पसन्द आया। खामोश पहाड़, झूमते पेड़, जंगली फूलों की खुशबू से लदी हवा, दरख्तों की हरी-मुलायम टहनियों पर चहचहाती हुई छोटी-छोटी रंग-विरंगी चिड़ियाँ, साफ पानी की धार लेकर बहता हुआ खुशनुमा झरना—मधु का दर्द बहुत कुछ कम हो चला।

और लोग खाना बनाने या नहाने-धोने में व्यस्त थे। मधु टहलती-टहलती कुछ दूर निकल गई थी। झरने के पास चट्टान पर बैठे हुए मुन्शीजी अपनी बूढ़ी आँखों से दूर पर टहलती हुई मधु को देख रहे थे। समझ रहे थे कि बेचारी मधु के दिल पर जो वज्र गिरा है, उसकी चोट वह इस जंगल में टहल कर रफा कर रही है।

'नरायन !...ओ नरायन !...' मुन्शीजी ने पुकारा।

'क्या है मुन्शी बाबू ?...' लठैत आ खड़ा हुआ उनके सामने।

'इस मधु को देखो, क्या कहते हैं, जंगल में निडर आगे बढ़ी जा रही है...बड़े राजा ने मुझे मधु के साथ रहने को कहा है। तुम पलटू को भी बुला लो और मेरे साथ आओ...लो, वह तो आँखों से ओझल हो गई....'

'जाने दो सरकार ! घूम-फिरकर अभी वापस आ जायेंगी....'

'नहीं, उसका दिमाग खराब हो रहा है आजकल...आड़ से होकर झरने में न कूद पड़े या कोई जंगली जानवर...बुला पलटू को जल्दी...वन्दूक भी ले ले....'

मुन्शीजी झपट कर उठे और उधर बढ़े, जिधर मधु को उन्होंने जाते देखा था। इस समय उनका हृदय आशंकित हो उठा था। मधु जरूर अपनी जान देना चाहती है। थोड़ी ही देर बाद नरायन और पलटू भी बन्दूक लिए मुन्शीजी के पीछे आ पहुँचे।

'कहाँ गई....दिखाई तो नहीं पड़ती...' मुन्शीजी परेशान हो बोले।

'ओ...वह हैं सरकार। उस झाड़ी के पास....झुककर जाने क्या देख रही हैं...' नरायन ने कहा।

सब लोग झटपट मधु के पास पहुँचे। उन्हें देखकर मधु चौंक पड़ी। बोली—'आप भी टहलने निकल पड़े मुन्शी काका !...'

'तेरे पीछे-पीछे चला आया...तू नहीं जानती कि क्या कहते हैं यह जंगल कितना खतरनाक है...क्या देख रही थी तू ?....'

'यह देखो मुन्शीजी ! यहाँ एक पत्थर पड़ा है, जिसे किसी ने गढ़कर चीते की शकल का बना दिया है ! मेरा ख्याल है कि पारस कभी यहाँ जरूर आया था।'

'तू तो बेकार परेशान होती है मधु ! चल लौट चलें....'

'नहीं मुन्शी काका ! पारस का पता लगाना बहुत जरूरी है। तुम लोग भी जरा खोजो, शायद आस-पास और कोई निशान मिल

आय....' मधु बोली।

सब लोग कुछ आगे बढ़े। एक चट्टान और मिली जिसे किसी ने गढ़कर चीते के मुँह की शकल बना दी थी।

पारस के आस-पास होने का यह दूसरा निशान था।

'चलो खोजें फिर....मगर बहुत दूर जाना ठीक नहीं होगा...' मुन्शीजी ने कहा।

जङ्गली जानवरों के चलने के एक स्पष्ट-सी राह बन गई थी, उसी रास्ते से लोग पुनः आगे बढ़े। थोड़ी-थोड़ी दूर पर इन्हें चीते की शकल के गढ़े पत्थर मिलते गये। ऐसा प्रतीत होता था कि इन्हें बनाने वाले कारीगर को केवल चीते की ही शकल आती थी! मधु आश्चर्यचकित थी। पारस की कारीगरी वह अच्छी तरह पहचानती थी। मगर पारस ने मानव मूर्तियों को बनाना छोड़कर चीते जैसे भयंकर पशु की शकल क्यों बनाई, यही आशंका का विषय था।

एकाएक चलते-चलते मधु रुक गई। घने जंगल के बीच पहाड़ में एक छोटी-सी गुफा दिखाई दी। गुफा के चारों ओर की चट्टानों को किसी अभ्यस्त कारीगर ने गढ़कर चीते की शकल बना दी थी। मधु ने इधर-उधर दृष्टि डाली चारों ओर चीते की ही शकलें बनी थीं।

सभी लोग ठिठककर खड़े हो गये।

मधु गुफा की ओर बढ़ने लगी तो मुन्शीजी ने उसका हाथ पकड़ लिया—'रुको बेटी! गुफा में कौन जाने कोई जंगली जानवर ही हो....लौटो अब! वह देखो, किसी शेर के पञ्जों का निशान गुफा तक चला गया है...'

सुनते ही लठैतों ने अपनी-अपनी बन्दूकें तान लीं।

मगर मधु जमीन पर झुककर देखती हुई बोली—'मुन्शी काका! यह देखो, शेर के सञ्जों के निशान के पास ही दो-तीन और भी निशान हैं...'

मुन्शीजी ने झुककर देखा तो चौंक पड़े—'अरे यह तो आदमी का पैर है...हे ईश्वर ! शेर के साथ आदमी के पैरों के निशान !....'

तभी गुफा के भीतर से किसी मनुष्य का स्वर आया—'अरे भाई चित्त ! चले गये क्या कहीं या नींद आने लगी तुम्हें ?'

इसके उत्तर में गुफा के अन्दर से ही किसी भयानक जानवर के धीरे से गुर्राने की आवाज आई।

डरकर लठैत और मुन्शीजी कई पग पीछे हट गये।

'भागो मधु, अन्दर जरूर शेर है...' मुन्शीजी ने कहा।

'पारस की आवाज है मुन्शी काका ?....' बोली मधु।

तभी मनुष्य का स्वर सुनाई पड़ा—'जग रहे हो दोस्त ! जरा इधर तो आओ....'

पुनः वहीं गुर्राहट सुनाई पड़ी।

'क्या कहते हैं, इस गुफा में पारस नहीं हो सकता मधु ! शेर के साथ कोई भूत होगा....' मुन्शीजी ने काँपते हुए कहा।

तब तक मधु ने जोरों से पुकारा—'पारस ! ओ पारस...'

किसी ने उत्तर नहीं दिया। परन्तु गुफा में से किसी के आने की आवाज आई। खड़खड़ाहट धीरे-धीरे बढ़ती गई।

मुन्शीजी ने लठैतों को बन्दूकें तैयार रखने का इशारा किया।

तभी गुफा के मुहाने पर एक भयंकर चीते का लम्बा शरीर खड़ा दिखाई पड़ा। इतने लोगों को देखकर उसने जम्हाई ली और भयंकर स्वर में गुर्राया। लठैतों की बंदूकें नीचे गिर पड़ीं। दोनों हथेली पर पैर रख कर भागे।

चीते को देखकर मधु भय एवं विस्मय से पत्थर बन गई थी।

गुफा में से तो पारस की आवाज उसने सुनी थी और पुकारने पर बाहर निकला एक कद्दावर चीता। चीते से बचकर निकल जाना कठिन था। इस बार चीता इतने जोरों से तड़पा कि मधु और मुन्शीजी दोनों मुँह के बल जमीन पर गिर पड़े।

तभी गुफा में से पुनः वही मानव स्वर सुनाई पड़ा—'क्या है चित्त ?...किसलिए क्रोध कर रहे हो भाई ?...'

मधु ने आँखें खोली। देखकर उसे बड़ा विस्मय हुआ कि उस भयानक चीते की बगल में एक दुबली-पतली मानव आकृति खड़ी है।

उसने मुन्शीजी को हिलाया। मुन्शीजी आँखें बन्द किए हुए ही बोले—'हम लोग मर गए या क्या कहते हैं जीते हैं मधु ?'

'जीते हैं मुन्शी काका ! देखो तो, पारस मिल गया....' मधु उठ खड़ी हुई।

मुन्शीजी ने आँखें खोलकर देखा—चीते की गर्दन पर हाथ रखे पारस खड़ा था। बोला पारस—'क्षमा करना भाई ! मेरा साथी गुस्से में आ गया था....आप लोग कौन हैं ?...'

'मैं हूँ पारस....मैं !...' मधु बोली कुछ निकट जाकर।

स्वर सुनते ही पारस की मुखाकृति गम्भीर हो गई।

धीरे से बोला वह—'आप हैं हजूर ?....बड़ा कष्ट हुआ आपको यहाँ तक आने में...पारस तो इस काबिल नहीं था सरकार कि आप तकलीफ उठातीं...चित्त ! तुम अन्दर जाकर बैठो....'

आज्ञाकारी सेवक की तरह चीता चुपचाप गुफा के अन्दर चला गया। मुन्शीजी और मधु पारस के पास आये।

'वहाँ से भाग क्यों आये कलाकार ?...' पूछा मधु ने।

'क्या कीजियेगा जानकर हजूर ? दिल ही तो है, नहीं लगा हवेली में तो इधर चला आया....आप तो अच्छी तरह हैं ?...'

'हाँ !....' मुन्शीजी ने कहा—'सभी लोग अच्छे हैं। नवल की शादी हो गई अचला से...'

'आप भी हैं मुन्शी बाबू ?....'

'हाँ भाई ! तुम तो बगैर मेरी मूरत बनाये ही चले आये। माला को रोकना चाहा, वह भी क्या कहते हैं नहीं रुकी...'

मधु ने लक्ष्य किया कि माला का नाम कान में पड़ते ही पारस

के मुख पर घृणा की एक स्पष्ट रेखा दौड़ पड़ी।

'मगर इस भयङ्कर जानवर से तुम्हारी जान-पहचान कैसे हुई पारस !....' मुंशीजी ने पूछा।

'भयंकर कहते हो इसे मुन्शी बाबू ? देखने में भयङ्कर लगता होगा। मैं तो देख सकता नहीं...इन्सानों की दुनिया से ऊबकर अब तो जानवरों की दुनिया में आ बसा हूं सरकार ! यहां मुझे बड़ा आराम है....'

'माला की याद नहीं आती तुम्हें कभी ?...'

'उसका नाम मत लो मुंशी बाबू !...माला इन्सान है। समझती है कि उसके बिना पारस की कारीगरी चल नही सकती। देख रहे हो न ! चित्तू को पाकर मेरी कारीगरी कितनी दूर आये बढ़ गई है ? जानवरों के दिल का नक्शा—उनका क्रोध, उनकी खुशी, उनकी पीड़ा—उनके मुख को गढ़ना मामूली काम नहीं सरकार !'

'माला ने खाना-पीना छोड़ दिया है पारस ! तुम्हारे ही लिए तो...' मधु ने कहा—

'किसी के खाने-पीने का क्या ठिकाना हजूर ? मैंने सोचा भी नहीं था कि माला को छोड़कर कभी मेरा इस चित्तू से साथ होगा और मुझे कच्चा मांस चबाना पड़ेगा। समय सब कुछ कराता है। कभी मैं चित्तू से पूछता भी नहीं कि वह कौन-से जानवर का शिकार कर लाया है। कभी आदमी का मांस ही यह खाने को दे तो मुझे खाना ही पड़ेगा। न खाऊँ तो ऐसे हमदर्द जानवर का दिल टूट जायगा।'

'हम लोग तुम्हें लेने आये हैं पारस ! तुम्हारी एक मूर्ति दिल्ली भेजी जा चुकी है। तुम्हें साथ लेकर मुझे जल्द पहुँचना है....' मधु बोली।

'पारस को लौटाने का ख्याल छोड़िये हजूर ! दुनिया की कोई ताकत मुझे यहाँ से नहीं ले चल सकती...' कहा पारस ने दृढ़ स्वर में।

'क्या माला भी नहीं ?...' मधु पीड़ित वाणी में बोली।

'माला मेरे लिए मर चुकी सरकार ! जीवित रहती तो पारस में इतनी ताकत नहीं थी कि वह उससे दूर रहता...'

'माला मरी नहीं है अभी।'

'माला का भोलापन मर चुका है। अब वह दुनिया की बुराई लेकर जिन्दा भी हो तो मेरे किस काम की....'

'तुम्हें चलना होगा पारस....' मधु ने दृढ़ आवाज में कहा।

'आपकी ऐसी ताकत नहीं हजूर ? मुझ पर हुक्म चलाने के लिए माला बनकर आइये....मैं सब कुछ भूल चुका हूँ, अन्धा-अपाहिज हूँ। जीती-जागती, हँसती-खेलती दुनिया एक अन्धे को लेकर क्या करेगी, खिलवाड़ ही तो ?...चित्तू ! चल भाई थोड़ा टहल आवें....'

आवाज सुनते ही वह भयानक चीता बाहर निकला और आकर पारस की बगल में खड़ा हो गया। पारस उसकी गर्दन पर हाथ रख धीरे-धीरे चल पड़ा पहाड़ की चढ़ाई पर।

उस अगम कलाकार को पाकर नरभक्षी चीता सीधी-सादी गाय बन गया था। मधु खड़ी-खड़ी बड़ी देर तक पारस और उसके भयानक साथी को देखती रही।

तभी भागे हुए लठैतों से चीते के हमला करने की खबर पाकर नवल तथा सात-आठ लठैत आ पहुँचे।

मधु को देखकर नवल को प्रसन्नता हुई।

'चीता कहाँ गया मधु ?...' पूछा उसने।

'वह जा रहा है पारस के साथ....' कहा मधु ने।

नवल ने दूर पर जाते हुए पारस और चीते को देखा। मानव और पशु की इतनी मित्रता देखकर उसके आश्चर्य की सीमा न रही।

'पारस ही तो है....' बोला नवल—'अन्धा है तभी तो चीते से दोस्ती कर बैठा। देख पाता तो डर से होश भी न रहता...'

'जादू जानता है सरकार, क्या कहते हैं...' मुन्शीजी बोले।

मधु थोड़ी देर पहले ही जंगल से लौटी है। थक गई है बहुत, इसलिए पलंग पर पड़ी हुई आराम कर रही है। मगर उसके मस्तिष्क को आराम करना मंजूर नहीं है। वह पड़ी-पड़ी ही बातें सोच रही है। आखिर पारस उसके साथ नहीं आया। उसने उसकी अवहेलना कर दी। कलाकार के दिल में न जाने कौन-सा काँटा चुभ गया कि वह सभी से घृणा करने लगा। मधु और माला की उसे परवाह नहीं, भयानक चित्त को वह अपनी प्रेरणा समझ बैठा है।

इन्सान की मूर्ति बनाना भूलकर जानवरों की शकल गढ़ने लगा है वह। मधु समझ गई है कि पारस को लौटा लाना आसान नहीं। भावुक हृदय की नासमझी जल्दी दूर नहीं होती।

मधु इस समय पागल पारस से हार गई है।

तभी—'मधु कमरे में हो क्या ?...' किसी का परिचित स्वर सुनाई पड़ा। मधु चौंककर उठ बैठी।

'आओ लोचन ठाकुर ! कब आये !...'

'दोपहर को ही—तुम लोग पहाड़ की सैर करने चले गये थे.... अच्छी तो हो न ?'

लोचन पलंग पर आकर बैठ गया ! मधु कुछ दूर खिसक गई।

'मेरे पास नहीं बैठ सकती मधु ?...' लोचन बोला—'उतनी दूर से चलकर आये हुए पाहुन से इतनी दूरी क्यों ?...बहुत सूख गई हो...बीमार थी क्या ?....'

'नहीं तो...पहाड़ घूम कर आई हूँ, मुँह उतर गया होगा...गाँव का क्या हाल है तुम्हारे ? माला कैसी है ?....'

'माला की तो कुछ खबर नहीं मुझे...कोठी पर सब कुशल से हैं...यह पत्र तुम्हारे नाम आया था...बड़े राजा ने तुम्हें दिया है... और बुलाया भी है...'

शंकर लोचन ने एक लिफाफा मधु के आगे रख दिया। मधु ने खोलकर उसे देखा। अखिल भारतीय कला परिषद के मन्त्री ने लिखा था —

देवी मधु!

आपको सूचित करते हुए मुझे हर्ष हो रहा है कि कलाप्रदर्शनी में रखी गई श्री पारस की त्रिमूर्ति ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है। देश-विदेश के दर्शकों ने मूर्ति की बड़ी प्रशंसा की है और मूर्तिकार के दर्शन की अभिलाषा प्रकट की है। हम शीघ्र ही श्री पारस के स्वागतार्थ एक उत्सव का आयोजन कर रहे हैं, जिसमें देश एवं विदेश के प्रायः सभी कलाकार पधारेंगे। हम सोमवार के दिन आपकी सेवा में उपस्थित होंगे।

श्री पारस को दिल्ली ले आने के लिए हमारे साथ परिषद के प्रधान एवं तीन-चार विदेशी कलाकार भी रहेंगे। साथ में हम श्री पारस द्वारा प्राप्त प्रथम पुरस्कार एवं सैकड़ों स्वर्णपदकादि भी लेते आयेंगे!...एक समाचार से आप को और भी प्रसन्नता होगी कि ब्रिटिश राजदूत ने भारतीय सरकार की अनुमति से श्री पारस की त्रिमूर्ति को ब्रिटिश म्युजियम, लन्दन में रखने के लिए खरीद ली है। शीघ्र ही श्री पारस को कई हजार रुपये ब्रिटिश गवर्नमेंट द्वारा प्राप्त होंगे। ब्रिटिश राजदूत ने हमें यह भी विश्वास दिलाया है कि वे श्री पारस जैसे श्रेष्ठ कलाकार को एक बार लन्दन में आमन्त्रित करेंगे... आपने एक अज्ञात कलाकार को संसार के सम्मुख लाकर अपने देश की मर्यादा बढ़ाई है। दुनिया कुछ ही दिनों में देखेगी कि भारत के अन्धे भी कितने कलाकार होते हैं। हमारी ओर से कोटिशः धन्यवाद। सोमवार को दर्शन देने के लिए तैयार रहियेगा।

आपका ही,

शि० ना० वाचस्पति

—मंत्री

पत्र पढ़कर मधु जैसे पागल-सी हो उठी। उसने लपक कर लोचन का हाथ पकड़ लिया। बोली—'पारस बहुत बड़ा आदमी हो गया है लोचन ठाकुर !....बहुत बड़ा....महान !...'

'क्या लिखा है पत्र में ?...'

'लो पढ़ लो...तुमने यह पत्र मुझे दिया, क्या इनाम दूँ तुम्हें ? क्या माँगते हो बोलो ?' कहते-कहते जैसे मधु एकाएक कुछ याद कर अपने-आप ही शर्मा उठी।

'जो कुछ माँगना था मधु वह बहुत पहले ही तुम्हें बता चुका हूँ। इनाम देना चाहो तो दे डालो। बड़ा उपकार होगा मेरा...'

सुनकर मधु का चेहरा उतर गया। गम्भीर होकर बोली वह—'काश, तुम्हें खुश कर पाती लोचन ठाकुर ! तुम ऐसा इनाम माँगते हो जो मेरे वश में नहीं....'

'अन्नपूर्णा के मन्दिर से कोई भिखारी भूखा लौट चले इसे सोच कर शर्म लगती है ! दाता के लिए कुछ भी अदेय नहीं। नारी अबला होकर भी दूसरों की झोली भरती आई है।'

'तुमने ओस की बूंद को अंगूर समझ लिया लोचन ठाकुर ! अंगूर बदन में ताकत देता है, मगर ओस तो प्यास भी नहीं बुझा सकती...कुछ दे सकती तुम्हें तो अपना खाली हाथ न दिखाती। दूसरों के अन्न पर पली हुई नारी अन्नपूर्णा नहीं कहलाती....मुझे क्षमा करो....'

'बस करो मधु ! मेरा दिल न दुखाओ अपनी बातों से ? बबूल के काँटों पर जरा-सा शहद लगाकर किसी के कलेजे में भोंक देने से उसका दर्द मीठा नहीं हो जाता...मैंने हवा के हलके झोंके को नारी के कोमल हाथों की मीठी थपकी समझी थी....बड़ी गलती हुई, जो तुमसे कुछ माँगकर तुम्हें शर्मिन्दा किया मैंने....मगर मधु ! भिखारी यह नहीं सोचता कि वह जिस घर के सामने झोली फैलाये खड़ा है, उसका मालिक पहले ही लुट चुका है। आशा बड़ी बेढब होती है....

कभी इस टूटते कलेजे में थोड़ी-सी साँस भर सको तो भिखारी को जीवन मिल जायगा, इसे भूलना मत...लोचन का दिल इतना कमजोर नहीं कि उसे तोड़कर तुम निकल भागो....'

'चुप हो जाओ लोचन ठाकुर ! मेरा दर्द काश तुम समझ पाते ! जिस मन्दिर में मधु रहती थी, उसमें तुमने अचला को स्थापित कर दिया—अब अचला का स्थान अपने दिल में मुझे देकर सन्तोष करो !'

'मन नहीं मानता मधु ! ईश्वर ने इन्सान को मन का एक ऐसा घोड़ा दिया है, जो खुद इन्सान पर ही सवारी कर बैठता है...जाने दो अब । दिल तुम्हारा बहुत दुखाया इसकी माफी माँग लूँ तो दे सकोगी ?...चलो, बड़े राजा ने बुलाया है....न हो तो तुम अकेली ही चली जाओ....तब तक मैं अचला से मिल लूँ । सबसे पहले तुमसे ही मिला एक खुशखबरी लेकर जिसका इनाम भी तुम नहीं दे पाई...'लोचन उठ खड़ा हुआ ।

'कब जाओगे गाँव ?....' पूछा मधु ने ।

'कल सबेरे...' लोचन ने कहा—'शायद जाते-जाते मिल न सकूँ तुमसे तो कुछ ख्याल न करना...लोचन के प्यार में ताकत होगी तो मधु के पैर खुद चले आयेंगे बजगवाँ तक....क्या बताऊँ बात-बात में बेताब की बात बकने लगता हूँ...'

लोचन कमरे से बाहर हो गया । मधु उठी और बड़े राजा के शयन-कक्ष की ओर बढ़ी । बड़े ठाकुर पलंग पर लेटे थे । मधु बैठकर उनका पैर दबाने लगी ।

'लोचन चिट्ठी लेकर गया था बेटी ?'

'हाँ बाबा !....'

'मिलने को तुमसे बड़ा उत्सुक था बेचारा । मैंने उसके मन की बात समझी तो चिट्ठी देकर तुम्हारे पास भेज दी...मैंने मुन्शीजी से सारी बातें सुनी । पारस मिला तो, मगर आया नहीं...'

'हाँ बाबा ! पत्थर गढ़ने वाला कलाकार खुद पत्थर बन गया है अब तो...'

'चीता पाल रखा है उसने ?...'

'नहीं, चीते ने ही उसे पाल रखा है। कच्चा मांस खा-खा कर उसका खून मर चुका है। जानवर बन गया है पारस ! इतना बड़ा चीता बकरी के बच्चे जैसा मासूम दिखाई पड़ता है पारस के साथ....'

'कैसी थी वह ?...' ठाकुर ने पूछा।

'क्या ?...'

'वह चिट्ठी...अनाथालय के किसी सहेली की थी क्या ?...'

'नहीं बाबा !....तुम्हें दिखाने को लाई हूँ। देखो, पारस कितना बड़ा बन गया है। जिस डोर का सहारा पाकर वह पतंग-सा आकाश में इतना दूर उड़ा, उसके साथ उसकी कुछ भी हमदर्दी नहीं बाबा !...'

ठाकुर कुछ देर तक वह पत्र पढ़ते रहे, फिर उसे एक ओर रखकर करवट बदल सो रहे। मधु ने एक स्पष्ट हिचकी की आवाज सुनी, जैसे ठाकुर रो रहे हो।

'बाबा !'

'क्या है मधु ?....'

'हिमालय पहाड़, जिससे कितनी ही नदियों को जीवन मिलता है, स्वयं इतना दीन कैसे हो चला ?....'

'हिमालय की छाती पर दरार पड़ गई है बेटी !...पहाड़ रो रहा है तो उससे नदियों को कुछ अधिक ही पानी मिल जायगा... देर हो गई है, जाकर सो रहो....'

'उस दिन की कहानी तो अधूरी ही रह गई थी बाबा !...'

'कौन-सी ?...'

'अपनी भाभी की कहानी जो सुना रहे थे...'

'कहानी !....' करुण स्वर में बोले ठाकुर—'बेटी ! 'प्रेमचन्द' के 'गोदान' में कहानी हो सकती है मगर 'प्रसाद' का 'आँसू' तो अतीत का इतिहास है....'

बूढ़े ठाकुर के मुख से दो साहित्यिक महारथियों का नाम और उनकी इतनी संक्षिप्त-सटीक समालोचना सुनकर मधु विस्मित हो उठी ।

'बाबा ! आपने साहित्य का अध्ययन किया है ?....'

'बुढ़ापे के दिन किताब के पन्नों पर ही सरकते हैं बेटी ! तुम लोगों जैसा पढ़ा-लिखा तो नहीं....नवल से माँगकर कभी-कभी थोड़ा पढ़ लेता हूँ....'

'भाभी की जो बात कहते थे उसे कहिये बाबा !....'

'बूढ़े पर तुझे तरस नहीं आता बेटी !....भाभी की बात पूछकर ही रहेगी तू ! भाभी को एक लड़की पैदा हुई थी । मरने से साल भर पहले उन्होंने उसकी शादी भी कर दी थी....वह लड़की भी तो नहीं रही मगर उसकी दो सन्तानें हैं अब भी...'

'कौन-कौन बाबा....'

'एक लड़का अन्धा मगर जानदार मूरतें गढ़ने वाला—और एक लड़की, आँखें रहते हुए भी अपनी नादानी से अन्धी !...'

'पारस !....' मधु चिल्ला उठी ।'

'हाँ बेटी ! .. हवेली में होता तो अन्धी आँखें लेकर भी इन्सान बना रहता...जंगलों में है तो चीते का साथ करके जानवर बन गया है....'

'पारस को यहाँ लाना होगा बाबा !....'

'नहीं, रहने दे उसे...जो भेद तू जान चुकी है, उसे अब दबा ही रह जाना चाहिये....मैंने सोचा था कि अपने खानदान का होने के नाते न सही, अन्धा होने के नाते ही उसकी सहायता करता रहूँगा मगर ईश्वर को यह मंजूर नहीं दीखता । जा बेटी ! अब सो रह....'

मधु बैठी-बैठी थोड़ी देर तक ठाकुर का पैर दबाती रही, फिर धीरे से उठकर अपने कमरे में चली आई। विचित्र-विचित्र सपनों में उसकी रात गुजरी। कभी पारस का चीता उसके ऊपर झपटता, कभी पारस भयानक रूप से ठठाकर हँसता दिखाई पड़ता। कभी माला छुरा लिए उसके सीने पर सवार होती तो कभी अचला नवल की आड़ से उसके ऊपर तीरों की वर्षा करती।

दूसरे दिन—प्रातःकाल ही अखिल भारतीय कला परिषद् की ओर से सात-आठ व्यक्ति आ पहुँचे। पारस से मिलते के लिए वे इतने उत्सुक थे कि मधु को उनके साथ उसी दिन पहाड़ पर जाना पड़ा, जहाँ अपने चीते के साथ पारस रहता था!

परन्तु मधु को बड़ी निराशा हुई, साथ ही कला-परिषद वालों को भी जब कि आस-पास का सारा जंगल खोज डालने पर भी न तो पारस ही मिला और न उसके चीते की शकल ही दिखाई पड़ी। मधु को ऐसा लगा जैसे शिकारी का तीर खाकर भी कोई अन्धा हिरन भाग निकला हो।

लाचार सभी लोग हवेली वापस आये।

उसके साथ सात-आठ दिनों तक ये लोग आस-पास के पहाड़ों पर जाकर घने जङ्गलों के बीच पारस को खोजते रहे और दूर-दूर के गाँवों में उसका पता लगाते रहे, परन्तु पारस का कुछ पता न लगा। यद्यपि मधु जानती थी कि पारस अपने गाँव नहीं गया होगा, फिर भी उसने एक बार बजगवाँ जाकर देख लेने का इरादा किया।

और उसके दूसरे दिन सभी लोग बजगवाँ की ओर चल पड़े।

• •

सारी दुनिया से उदासीन पारस को अपने चित्तू के साथ से बड़ा सन्तोष था। जो सहानुभूति उसे मानवीय जगत से प्राप्त नहीं हो सकी थी, वह उसे एक वन्य-पशु से मिली। पारस ने सारे जमाने को हृदयहीन समझ लिया। उसको इन्सान की गन्ध तक से घृणा हो गयी। अपनी गुफा में पारस बैठा है। गालों पर बहती हुई आँसू की लहरें अब तक हरी हैं। कोई मानसिक वेदना है उसे। कोई हार्दिक कष्ट है जिससे वह बेकरार हो उठा है।

बगल में बैठे, अपनी जीभ से उसका पैर चाटते हुए चित्तू की परवाह नहीं उसे। वह माला की बात सोच रहा है।

वह माला, जिसे एक दिन वह महल में सोती छोड़ आया था।

आज वही माला मिट रही है।

पारस की प्रेरणा आज विलीन हो रही है।

मधु ने कहा था कि वह खाना-पीना छोड़ बैठी है—और पारस यहाँ मांस की बोटियाँ चबाता रहा है। राक्षस हो गया है वह। इस चित्तू ने उसकी मानवता नष्ट कर दी है, उसमें पशुत्व आ गया है।

पारस व्यग्र हो उठा। वह अगल-बगल की जमीन टटोलने लगा। उसने थैली और लाठी उठा ली। उठकर खड़ा हो गया तेजी से। अब वह नहीं रहेगा यहाँ—पारस अब इस जङ्गल में नहीं रह सकता। वह पशु नहीं मानव है। उसे चित्तू नहीं, माला चाहिये। उसे चित्तू के कच्चे मांस के टुकड़े नहीं, माला के हाथों की पकाई बाजरे की रोटी चाहिये।

कन्धे से थैला लटकाये और हाथ में लाठी लिए धीरे-धीरे चल पड़ा पारस, बेहोश-सा। उसे जाते देखकर चीता गुर्राया, फिर उठकर उसकी बगल-बगल चलने लगा।

पारस ने चलते-चलते चीते का सर थपथपा कर कहा—'लौट जा चित्तू! इस समय पारस तेरी भलाई भूल गया है। माला की आखिरी सांस मुझे पुकार रही है और इस अन्धे पारस में इतनी

ताकत नहीं कि वह माला की पुकार पर स्थिर रह सके। अपनी-अपनी मजबूरी है मेरे साथी! चार दिन के बसेरे में तुमने जैसी दोस्ती निभाई, वह आज के इन्सान के बस की बात नहीं....लौट जाओ चित्त ! जिन्दगी की आखिरी साँस तक यह गरीब कारीगर तुम्हारी याद करता रहेगा...'

पारस चलता रहा। चीता भी लौटा नहीं। घण्टों तक दोनों खामोश होकर साथ-साथ आगे बढ़ते रहे। जंगल की सघनता कम होने लगी। पहाड़ की ढाल शुरू हो गई। मीलों नीचे उतर कर पारस समतल जमीन पर जा पहुँचा।

पारस रुक गया। चीते की पीठ थपथपा कर बोला—'चित्त भाई! अगर आज का इन्सान तुमसे कुछ सीख नहीं सकता तो दूसरे जन्म में चीता होकर ही पैदा होना मैं पसन्द करूँगा—अब लौट जाओ।'

चीता प्रेम से व्याकुल होकर पारस का पैर चाटने लगा।

पारस ने उसका सर एक बार फिर थपथपाया, इसके बाद चल पड़ा। चीता उसी स्थान पर खड़ा-खड़ा पहाड़ की ढाल पर उतरते हुए पारस को देखता रहा।

पारस रास्ते से अनभिज्ञ था। ऊबड़-खाबड़ जमीन, जंगली रास्ता फिर भी वह शाम होते-होते एक गाँव तक पहुँच ही गया।

वहाँ रात भर रुक कर फिर पूछते-पूछते वह बजगवाँ की सरहद पर पहुँचा। वहाँ से आगे के रास्ते का एक-एक कंकड़ पारस का परिचित था। वह तेजी से आगे बढ़ा। वह माला से मिलने आया है। भूखी-प्यासी उसका नाम रट-रट कर मरती हुई माला उसे देख कर कितनी खुश होगी।

अहा ! यह चबूतरा ! यह लम्बी-लम्बी डालियों वाला पेड़।

पारस को लगा जैसे वह बहुत दिनों बाद अपने दो अभिन्न मित्रों से मिल रहा हो।

उसने प्यार भरे हाथों पेड़ का तना टटोला। नीचे चबूतरे पर बैठकर उसने उसकी एक-एक शिकन बड़े प्रेम से छुई फिर ठण्ढी साँस लेकर सुस्ताने लगा। माला की आवाज नहीं सुनाई पड़ती। झोपड़ी में पड़ी होगी बेचारी ! खाना-पीना छोड़ दिया है तो कमजोर भी बहुत हो गई होगी।

थोड़ी देर तक चबूतरे पर बैठा-बैठा पारस माला के बाहर आने का इन्तजार करता रहा, फिर व्यग्र होकर जोरों से पुकारा—'माला ! ओ माला....'

चुप होकर पारस माला की आवाज सुनने के लिए कान लगाये रहा मगर उसे कुछ सुनाई न पड़ा।

एकाएक उसके मस्तिष्क की एक-एक नसें भयंकर वेग से झनझना उठीं। उसने दो-तीन बार माला को पुकारा, फिर तेजी से उठ खड़ा हुआ और झोपड़ी की ओर दौड़ा।

झोपड़ी की दीवार उसके हाथों से छू गई। यह क्या ? वह हाथ बढ़ाकर दूर-दूर टटोलता चला, दीवारें टूट गई थीं। झोपड़ी खण्डहर हो गई थी। दरवाजे के पास पहुँचा तो उसे जमीन पर गिरा पाया।

पारस के होश उड़ गये। लड़खड़ाती आवाज में उसने पुकारा—'मा....ला....'

'पारस भैया !'

पारस में जान आ गई। उसने हाथ आगे बढ़ाते हुए पुकारा—'माला !....कहाँ है मेरी बच्ची तू ? तेरा पारस लौट आया....देख तो....'

तभी आकर कोई पारस से लिपट गया, पारस ने उसे भर जोर अपने कलेजे से दबा लिया और प्रकम्पित हाथों से उसकी पीठ सहलाने लगा।

'माला ! तुझसे रूठ गया था तो तूने खाना-पीना ही छोड़ दिया ?...अरे !....' पीठ सहलाते-सहलाते पारस रुक गया—'कौन है....'

'मैं हूँ पारस भैया ! तुम्हारा रम्मू !....' उसके शरीर से लिपटे हुए चार साल के भोले बालक ने कहा।

माला की याद में पागल, अन्धा पारस चार साल के बालक और माला में कोई अन्तर ही नहीं समझ सका था। जब अन्तर का ज्ञान उसे हुआ तो उसके हाथ ढीले पड़ गये, शरीर कांपने लगा। सर पकड़ कर वह जमीन पर बैठ गया।

'क्या हो गया है पारस भैया तुम्हें ?'

'माला कहाँ है रम्मू....' पूछते-पूछते जैसे पारस के हृदय की धड़कन अपने आप ही बन्द होती जा रही थी।

'माला तो...' बालक ने सरल स्वभाव में उत्तर दिया—'एक दिन माला सो गई थी भैया !...गाँव वाले जगाने लगे तो माला जगी नहीं। गुस्से में आकर लोग उसे बाहर निकाल लाये और ले जाकर तालाब के किनारे टीले के पास जला दिया...'

पारस एक शब्द भी नहीं बोल सका। आँख से आँसू भी नहीं बह सके। पश्चात्ताप की ज्वाला इतनी तेज हो उठी कि उसके हृदय का एक-एक कोना जलने लगा।

माला मर चुकी थी। भूखी-प्यासी पारस के नाम की माला जपती हुई। माला इतनी दूर जा चुकी थी कि उसे छू सकना अन्धे पारस के लिए अब असम्भव था। पारस की जीती-जागती प्रेरणा अब मौत के घने अन्धकार में विलीन हो गई थी।

'रम्मू !....' पारस का स्वर इतना गम्भीर था जैसे भविष्य का तूफान—'मुझे वहाँ तक ले चल रम्मू !....'

'कहाँ तक भैया ?'

'जहाँ माला जलाई गई थी....'

आगे-आगे बालक रम्मू और पीछे-पीछे पारस—

गाँव से काफी दूर पर एक बड़ा-सा तालाब था। तालाव के किनारे बड़ी-बड़ी चट्टानों वाला एक ऊँचा-सा टीला खड़ा था।

'यही जगह है भैया !....'

'अब तुम जाओ रम्मू !'

बालक चला गया। पारस चुपचाप जमीन पर बैठ गया। हाथ से टटोला तो चिता की राख में हथेली सन गई।

जिस शरीर को इतने यत्न से पाला था पारस ने, उसकी राख को उठा-उठा कर अपने सीने की उभरी हड्डियों पर मलने लगा। अन्तर का तूफान बाहर आने को मचल रहा था।

तूफान आया—और पारस माला-माला चिल्लाता हुआ उसकी चिता की राख में लोटने लगा। रुके हुए आँसू इतने वेग से बह चले, मानो वे चिता की राख धोकर साफ कर देंगे।

पारस अपनी छाती पीटने लगा।

माला चली गई। पारस की माला भूखी-प्यासी चली गई।

बहन की जान लेकर आज पारस स्वयं निर्जीव हो गया था।

रात भर पारस उस एकान्त सुनसान स्थान में चिता की राख में लिपटा हुआ रोता-तड़पता रहा। वह तो पत्थर की मूर्तियाँ बनाता था। चिता के राख की मूर्ति गढ़ सकता तो वह अभी ही माला को सजीव कर देता। सबेरे का सूरज आसमान पर चमका तो पारस उठ कर टीले की एक बड़ी-सी चट्टान पर आ बैठा। लाठी बगल में रख लिया। चट्टान से उठँग कर बैठ रहा।

कुछ गाँव वालों ने उसे देखा भी मगर अन्धे से कौन सहानुभूति दिखाता। दोपहर तक बैठे रहने के बाद पारस के हाथों में एकाएक कम्पन हुआ। उसकी अभ्यस्त उँगलियाँ उस चट्टान को टटोलने लगीं। एकाएक उसने अपना थैला खोला और उसमें से छेनी-हथौड़ा बाहर निकाला।

पारस आज मूर्ति गढ़ेगा—माला की मूर्ति ! ऐसी कि जिसकी कला दुनिया में एक हो....अकेली ! माला की जान लेकर अब माला की मूर्ति में जान डालेगा। हाथ तेजी से चलने लगे। ठक-ठक की आवाज होने लगी। भूखा-प्यासा, शोक का मारा कलाकार अपनो

कला को अमर बनाने लगा ?

गाँव वाले उधर आते और देखकर चुपचाप चले जाते । कलाकार के रोते हृदय की परख किसको थी ?

पारस दिन भर मूर्ति गढ़ता और रात में उसे कलेजे से लगाकर सिसकता रहता । सात दिन बीत गये । पत्थर की वह चट्टान धीरे-धीरे एक सौन्दर्यमयी नारी का रूप ग्रहण कर रही थी । गर्दन ऊपर तक का भाग पूर्ण हो चुका था ।

सात दिन से उसने कुछ न खाया न पीया । विश्राम भी किया था उसने । एक लगन और एक पागलपन लिए वह कलाकार अपनी कला के पीछे जान से उदासीन हो पड़ा था ।

उसकी शक्ति क्षीण हो चली थी। हाथ-पैरों का कम्पन गया था ।

× × ×

मधु कलापरिषद वालों के साथ जिस समय बजगवाँ पहुँची दोपहर हो चुकी थी । थके-माँदे अभ्यागतों का लोचन ने खूब किया । पता लगाने पर जब मधु को मालूम हुआ कि पारस वहीं तो उसकी प्रसन्नता का पारावार न रहा ।

जल्दी-जल्दी खा-पीकर सब लोग उस तालाब वाले टीले की रवाना हुए । लोचन भी साथ था । धीरे-धीरे सब जाकर पारस चारों ओर खड़े हो गये । कलाकार अपनी साधना में रत था, उसे किसी के आने की खबर तक न हुई ।

कला-परिषद के लोग सारी दुनिया से उदासीन उस कलाकार की अगम कला-साधना आश्चर्यचकित नेत्रों से देख रहे थे मधु ने आगे बढ़कर पारस की पीठ पर हाथ रख दिया तो चौंक पड़ा ।

बोला—'कौन है ?'

'मैं....'

'आप हजूर !....अन्धे कारीगर की जान आपने ले ली....अब र क्या लेने आई हैं....'

'दुनिया के लिए माला भले ही मर चुकी हो, मगर तुम्हारे लिए तो वह अब भी जिन्दी है पारस ! तभी तो उसकी इतनी अच्छी मूर्ति बना सके तुम...'

'आप चली जायँ हजूर !' पारस एकाएक चिल्लाकर बोला—नहीं तो मैं इस मूरत पर सर पटक-पटक कर अपनी जान दे दूँगा....'

'देखो तो पारस ! दिल्ली से कितने लोग तुमसे मिलने आये हैं। तुम्हारे लिए पचीसों हजार का ईनाम लाये हैं....' मधु ने कहा।

'मुझे धन नहीं, मेरी माला चाहिये....वह माला, जिसने मेरा नाम रटते-रटते अपनी जान दे दी, जिसने मुझे खोकर खाया नहीं, जिसकी चिता की राख मेरे बदन पर लगी हँस रही है।' पारस ने अपना हाथ रोक दिया और हाँफता हुआ मूर्ति के पास बैठ गया।

'तुम्हारा बदन गर्म है पारस !...' मधु बोली।

'बदन की गर्मी ही तो जीवन है हजूर !...ठण्ढा बदन तो मुर्दों का होता है।

'तुम अद्भुत हो कलाकार !' कलापरिषद वालों में से एक ने कहा।

'मैं अपनी बड़ाई नहीं सुनना चाहता।' पारस अत्यन्त व्यग्र होकर बोला।

'तुम महान हो....' दूसरे ने कहा।

'चुप रहिए सरकार ! अन्धे कारीगर को मरने के लिए छोड़ दीजिये....'

'तुम्हारे जैसा कलाकार आज सारी दुनिया में नहीं....' तीसरे ने कहा।

'ईश्वर के लिए चुप रहिए आप लोग या मुझे मार डालिए—बड़ी दया होगी।'

'इस समय देश-विदेश के कलाकार तुम्हारी अभ्यर्थना करने को उत्सुक हैं....तुम हमारे साथ चलो....' चौथा बोला।

पारस चुप हो रहा। काँपते हाथों में छेनी-हथौड़ा चुपचाप पड़ा था।

'वाह-वाह ! क्या मूर्ति बनाई है कि बस अब बोलना ही चाहती है ..' पाचवें ने कहा।

पारस अधिकाधिक व्यग्र होता जा रहा था। उसके मुख की गम्भीरता बढ़ती जा रही थी। उसके काँपते हाथों में दृढ़ता आ रही थी। छेनी-हथौड़ा हाथ में लिए वह पुनः उठ खड़ा हुआ।

'यह मूर्ति अगर प्रदर्शनी में पहुँच जाती तो पचासों हजार का वारा-न्यारा हो जाता....' छठवें ने कहा।

'कलाकार की कला पराकाष्ठा तक पहुँच चुकी है। मजबूर है वह तो इसी से कि इसमें जान नहीं दे सकता...' सातवाँ बोला।

'जान भी दे सकता हूँ सरकार !....' इस बार पारस बोला—'कलाकार की कला देखना चाहो तो अभी जान दे दूँ....'

'तुम जादूगर हो मूर्तिशिल्पी ! सब कुछ कर सकते हो तुम.... मूर्ति में जान देना तो तुम्हारे बायें हाथ का खेल है। दे दो जान जरा हम भी देख लें....' कला परिषद के आठवें सदस्य ने कहा।

'लीजिए !....'

पारस के बायें हाथ की आठ इञ्च लम्बी छेनी ऊपर उठी, दायें हाथ का हथौड़ा सजग हुआ। मधु पारस का इरादा समझकर उसकी ओर लपकी। मगर तब तक पारस ने छेनी अपने सीने पर रखकर हथौड़े की चोट कर दी थी।

कलाकार ने सचमुच अपनी जान दे दी।

चट्टान पर पारस का लहूलुहान शरीर पड़ा छटपटा रहा था। मधु उसके सीने से बहते हुए रक्त से हथेली रँग रही थी।

कला परिषद के लोग आश्चर्यचकित से खड़े थे।

कला जी उठी थी, कलाकार मर चुका था।

सब घुटनों के बल पारस की लाश के पास बैठ गये और बहुत देर तक चुप रहकर उस महान कलाकार की दिवंगत आत्मा के प्रति सम्मान प्रकट करते रहे।

और तब लाश जलाने का प्रबन्ध किया जाने लगा।

मधु ने अपना भरा चेहरा उठाकर लोचन की ओर देखा।

लोचन पास आ गया।

बोली मधु—'तुम्हारा गाँव धन्य है लोचन ठाकुर! जहाँ ऐसे-ऐसे कलाकार जीते-मरते हैं। अब यहाँ से जाने का मेरा इरादा नहीं है। अपनी कोठी में थोड़ी-सी जगह दे सकोगे मुझे?'

'मेरा सब कुछ तुम्हारा है मधु....'

'अचला का स्थान देने का वादा करो, तभी मुझे अपने पास रख सकोगे...' मधु ने कहा।

'दिया....' गम्भीर भाव से लोचन बोला—'तुम्हारी परीक्षा में लोचन कभी असफल नहीं हो सकता मधु बहन!....'

गाँव के बहुत से लोग आ गये थे। जल्द ही चिता तैयार हो गई और देखते देखते आग की भयानक लपटों ने पारस के शरीर को अपनी गोद में लपेट लिया।

कला जल रही थी जगमग।

कलाकार राख हो गया था जलकर...

—बस—